सोच में इज़ाफे की पत्रिका

सदीनामा

ISSN : 2454-2121

वर्ष-17 ❐ अंक-01 ❐ 1 से 30 नवम्बर, 2016 ❐ पृष्ठ-16+8 ❐ R.N.I. No. WBHIN/2000/1974 मूल्य-5.00 रुपए

तलाक से आगे जहां और भी है

(नोट : मुमकिन हो तो इसे एक स्त्री की बात मान कर पढ़ें)

मैं भारतीय हूँ। मैं मुसलमान हूँ। मैं भारतीय मुसलमान स्त्री हूँ। पिछले कुछ महीनों से मेरी जिन्दगी के बारे में खूब बात हो रही है। मेरे जेहन में भी कई सवाल उठते रहे हैं। बात, जिन्दगी के बारे में होती है और बहस की सुई तलाक-तलाक-तलाक और निजी कानून पर जाकर अटक जाती है क्या मेरी जिन्दगी का सबसे बड़ा मसला यही है? मेरी जिन्दगी, शादी के पहले भी है, शादी के बाद भी और शादी के बिना भी। तलाक के बाद भी रहेगी। तो फिर मेरी इन जिन्दगियों के मसलों के बारे में भी कुलकर क्यों बात नहीं की जाती है?

मैं इस मुल्क की शहरी हूँ। यानी इस मुल्क का संविधान मेरे लिए भी है। वह जिन हकों की बात करता है, वह मेरे लिए भी होंगें। हा, मैं मुसलमान हूँ, संविधान इस नाते भी मेरा कुछ ख्याल रखता होगा। मगर मैं स्त्री भी हूँ, संविधान इस बिना पर मेरे साथ गैर बराबरी की भी तो बात नहीं ही करता है। है न!

भारत में मुसलमानों की कुल आबादी करीब सवा 17 करोड़ है। यानी देश में 14.2 फीसदी मुसलमान हैं। आम समझ तो यही कहती है कि कुदरत के मुताबिक इसमें आधे पुरुष होंगे और आधी स्त्रियाँ होंगी। तभी तो हमे आधी आबादी कहते हैं। लेकिन, हम पुरुषों से ढाई फीसदी कम हैं! ढाई फीसदी का मतलब है 43 लाख 2 हजार 732 मुसलमान स्त्रियां, मुसलमान पुरुषों के मुकाबले कम हैं।

एक और नंबर देखिए। छह साल तक के मुसलमान बच्चे-बच्चियों की कुल आबादी में लगभग तीन फीसदी लड़कियां यानी आठ लाख 30 हजार लड़कियाँ एक दशक में कम हो गयी हैं। पूरे मुल्क में छह साल तक की उम्र के प्रति हजार मुसलमान लड़कों के मुकाबले 943 लड़कियाँ हैं। 2001 में यह तादाद 950 थी यानी हम लड़कियाँ घट रही हैं, यह तादाद अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग है। मसलन, जम्मू-कश्मीर में 871, तो उत्तर प्रदेश में 933 हैं।

अगर कुदरत की वजह से लड़कियाँ कम नहीं हैं, तो हम बेटियाँ कहाँ गायब हो गयीं? मतलब साफ है, हम मुसलमान बेटियाँ अपने घरों में अनचाही हैं। संविधान कहता है, मेरे साथ सिर्फ इसलिए फर्क नहीं किया जायेगा, क्योंकि मैं स्त्री हूँ। तो फिर इस फर्क पर शोर क्यों नहीं मचता? आखिर हम बेटियों का वजूद खतरे में पड़ने से हमारा मजहब खतरे में क्यों नहीं पड़ता?

अगर हम जी गयीं, न चाहते हुए भी बड़ी हो गयीं, तो हमारा भी मन करता है कि हम पढ़े-लिखें। लेकिन, हमें तो पढ़ने भी नहीं दिया जाता। वैसे ही मुसलमानों में साक्षर लोगों की तादाद सबसे कम (68.5 फीसदी) है। साक्षर यानि जो नाम लिख लेते हैं। लेकिन, यहाँ भी पुरुष हमसे आगे हैं।

देश भर के मुसलमान पुरुषों की 75 फीसदी आबादी

शेष पृष्ठ 20 पर

समीपेषु

कोलकाता के हिन्दी पाठ्यपुस्तक प्रकाशक इतिहास के पन्नों ने जाने को बाध्य

पश्चिम बंगाल अहिन्दी भाषी प्रान्त है परन्तु हिन्दी की विकास यात्रा में इस राज्य का अप्रतिम योगदान रहा है। इस प्रान्त को अतीत में भारतवर्ष की औद्योगिक एवं सांस्कृतिक राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। पड़ोस के राज्य बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड और प्राय: उत्तर भारत के सभी राज्यों से लोग यहाँ रोजी रोजगार की तलाश में आये। हिन्दीभाषी राज्य से आये लोगों ने जब रोजी रोजगार प्राप्त कर लिया तो अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए विद्यालयों, पाठशालों की जरूरत को महसूस की। इसी क्रम में राजस्थान के प्रवासी मारवाड़ी और उत्तर प्रदेश और बिहार के लोगों ने शिक्षा के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ किये। अनेक छोटे बड़े स्कूल खुले और ये लोग ही शिक्षण कार्य में लगे। हिन्दी माध्यम से शिक्षा देने के क्षेत्र में एक बड़ी कठिनाई हिन्दी पाठ्य पुस्तकों का अभाव महसूस हुआ अतएव कुछ शिक्षकों ने अपने स्तर पर हिन्दी में पाठ्य पुस्तक प्रकाशित करने के संकल्प से लगे।

यहाँ हिन्दी माध्यम के जितने भी पाठ्यपुस्तक प्रकाशक हैं सभी की प्राथमिक पहचान शिक्षक के रूप में हैं। प्राय: प्राय: सभी प्रकाशक शिक्षक ही रहे हैं। उस समय हिन्दी को पूरे राष्ट्र की जनभाषा बनाने का प्रयास चल रहा था। जो शिक्षक स्कूलों में अध्यापन कार्य उन्होंने राज्य के पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकें तैयार की और छोटे तौर पर प्रकाशित किया। छोटे पैमाने पर प्रारम्भ हुआ यह कार्य धीरे-धीरे बड़ा रूप लेने लगा। इस काम में प्रतिष्ठा थी धीरे-धीरे लोग जुड़ते गये और देखते ही देखते हिन्दी माध्यम की अनेक प्रकाशन संस्थाएं विकसित हो गईं। परन्तु आज हिन्दी माध्यम के प्रकाशकों की संख्या दिनों दिन कम होती जा रही है। प्रकाशन के क्षेत्र में इन प्रकाशकों की अगली पीढ़ी अब आना नहीं चाहती। ऐसा क्या हुआ कि अचानक हिन्दी प्रकाशन संस्थान बन्द होने लगे ? यह विचारणीय प्रश्न है।

शिक्षा का अधिकार के तहत केन्द्र और राज्य सरकारों ने मुफ्त पुस्तक और शिक्षण सामग्री देने के लिए अपने तौर पर पुस्तकें प्रकाशित करने लगी और राज्य से संबद्ध सभी स्कूल इन्हीं पुस्तकों को पढ़ाने के लिए बाध्य हो गये। यह हिन्दी प्रकाशकों के लिए वज्रपात के समान हुआ। आज लोग जागरूक हैं और उन्हें लगता है कि अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा किसी अन्य माध्यम की शिक्षा से बेहतर है, और वे अपने बच्चों को भेड़ चाल में आकर स्तरहीन ही सही परन्तु अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भर्ती करने लगे। यह एक और कारण है हिन्दी प्रकाशकों के विलुप्त होने का।

आज आवश्यकता है कि सरकार हिन्दी पाठ्यपुस्तक प्रकाशकों के विलुप्त होने से बचाने के लिए प्रयास करे। यह एक बड़े पैमाने पर रोजगारपरक व्यवसाय है। आज जब रोजगार की जरूरत है तब ऐसे व्यवसाय को इतिहास के पन्ने में जाने से बचाने की जरूरत है।

अतिथि सम्पादक

पत्राचार का पता :

सम्पादक - सदीनामा
48/49A, Swiss Park,
Kolkata-700 033
West Bengal. India
☎ : 9231845289
E-mail : jjitanshu@yahoo.com

संपादक मण्डल

उप-संपादक : तितिक्षा तथा पापिया भट्टाचार्य
संपादकीय सलाहकार: यदुनाथ सेउटा
संपादक : जितेन्द्र जितांशु
विशेष सहयोग : आरती चक्रवर्ती, एच० विश्ववाणी तथा राजेन्द्र कुमार रुईया (अमेरिका)
सभी अवैतनिक हैं।

जब किसी सिरफिरे के हाथ

– प्रा० प्रेमचंद सोनवाने

जब किसी सिरफिरे के हाथ
जलती मशाल आती है
तब रोशनी नहीं
झोपड़ियाँ जलाई जाती हैं

क्रान्ति की परिभाषा
समग्र कल्याण की भाषा
शून्य हो जाती है
बचती है केवल हिंसा
वर्ग रचना निर्मित द्वेष
परिवर्तित होता परिवेश

पेड़-पौधों पर
रास्ते के किनारे
पड़े पत्थरों पर
हजारों परिभाषायें अंकित है
जो जिन्दगी को- दुनियां को
प्रेम और सहयोग का
विश्व शान्ति और एकता का
संदेश देती है–
लेकिन इतिहास के हत्यारों ने
अपने झूठे अहम को
आहत समझ
आक्रमण कर दिया
उन स्वर्णाक्षरों पर
शायद हमने गलत तत्वों के हाथ
अधिक सत्ता की बागडोर
सौंप दी है
अत: हमने अपनी संस्कृति की
मूल अस्मिता तक को खो दिया है

शायद कुछ ऐसा लगता है
जब किसी सिरफिरे के हाथ
तनिक सत्ता की बागडोर आती है
तब केवल अपनी अहम की तुष्टि के लिए
प्राप्त शक्ति प्रयोग में लाई जाती है

यह प्रजातंत्र बनाम राजतंत्र
या मात्र वर्ग तंत्र
मुस्कराते जहरीले
बेशरम के झाड़
प्रगति के नाम
भीख या वादों की आड़
कुकुरमुत्ते बने बरगद के झाड़
प्रकृति के साथ खिलवाड़

अपराधी का आसन पर
मेंढक फूदक रहे सिंहासन पर
न जाने कौन सा काम हो गया
आम-अनार चौकीदार हो गया
नज़र लगी किसकी कि
विचार का देवता
बीमार हो गया
जो डँसता हो
जनमानस के अंतस को
वह पूज्य हो गया
जब किसी सपोले को
बेशरम की झाड़ की
आड़ मिलती है
तब हिंसा का तांडव होता है
और निर्दोषों की जान जाती है

गुरुनानक वार्ड, गणेशनगर, गोंदिया - 441601 (M.S.)

आत्म हत्या के बाद

हाय ! ये मैंने क्या कर डाला।

आवेश, हताश और आक्रोश के तगड़े झंझावात में फँसा हुआ था। कहीं से भी राह नजर नहीं आ रही थी। कोई दिखता भी तो न था जो इस अंधे कुएं से निकलता। क्या करता ? उबड़-खाबड़ रास्ते और फिर लोगों की कहकही भरी नजरें, किसी का भी तो सामना न कर सका था। सोचा मुक्ति का यह पथ चुन लूँ। शायद और कुछ भी सूझ भी नहीं पाया। महीनों इस पथ पर भटकता रहा.... भटकता रहा। अंत में एक दिन आया जब हर पथ में मैंने छुटकारा पाने के लिए सुगम राह निकाला, घर में भी इस जीवन की लीला को समाप्त करने का साधन जुटाया और एक पल में प्राण पखेरू उड़ गये।

पर यह क्या ? शरीर मेरा अधर में झूल रहा है, मैं....मैं इस शरीर से बाहर खड़ा अपने शरीर, अपने घर, अपने आस-पास के वातावरण को निहार रहा था।

एक तरफ पत्नी कभी दीवारों से सिर टकरा-टकरा कर रो रही है, रोते-रोते बेहोश हो जा रही है, होश में आती है फिर क्रन्दन करते करते बेहोश हो जाती है। हाय हाय की चीख चारों ओर गूँज रही है। मेरी प्यारी 'सुनयना' जिसके चेहरे पर कभी कॉटों के चुभन के अहसास को देखकर भी मैं व्यग्र हो उठता था आज वही विक्षिप्त हुए जा रही है और भी मेरे कारण।

यह क्या ? मैं उसको छू भी नहीं पा रहा हूँ। मेरे स्पर्श का उसे जरा भी भान नहीं हो पा रहा है। कैसे चुप कराऊँ ? क्या करूँ ? हे प्रभु ? ? और मेरे लाल दो के दोनों अनाथ बने बैठे हैं। 'हाय रे बेदर्दी कैसे कटेंगे इनके दिन ? इतना भी तो नहीं कि किसी का सहारा मिले। अचानक मेरे मन में दो दिन पूर्व की घटना कौंध उठी, रास्ते में छ: साल के एक बच्चे को कचरा चुनते एवं उसमें फेंके हुए सड़े जूठन को खाते देखा था। उसके भी तो माँ-बाप ने आत्महत्या ही किया था। तो क्या हमारे बच्चे भी...

परिजन, सुजन, सहपाठी सभी विलाप कर रहे हैं। मेरे कृत्य को कोस रहे हैं। सारे ही मुझसे प्यार करते थे जो जीते जी मैं कभी समझ न सका था।

आह ! यह मैंने क्या किया ? दो पल की नादान हवायें एक ही झटके में शरीर से आत्मा को अलग कर बैठीं। अब तो इस शरीर में प्रवेश का कोई राह भी नजर नहीं आ रहा। इसपर बैठ तो जा रहा हूँ पर उसमें दुबारा प्रवेश नहीं कर पा रहा हूँ। अरे ! यह क्या ? पुलिस वाले सुनयना के हाथों में बेड़िया डाल रहे हैं ? अरे सुनो भाई उसे क्यों तंग करते हो ? आह मेरी आवाज कोई सुन भी नहीं पा रहा है ? अरे कोई तो सुनो ? कुछ तो करो ? मेरे शरीर को भी साथ ले जा रहे हैं। जिस तन को नित नये प्रसाधनों से सजाया करता था उसे इस बेदर्दी से घसीटा जा रहा है, सोचा भी न था। ओह इसे फाड़ा जा रहा है। हाय री किस्मत....

मैं विलाप कर उठा। मन तो रो रहा था अब तन भी रो रहा है। जिनकी खातिर मैं परेशानियों को झेलता रहा अब उन्हीं पर बिजली गिरा बैठा। लोट पोट होकर दहाड़े मारकर रोता रहा पर कोई सुनने वाला न था। क्यों किया मैंने ऐसा, क्यों किया ? पर अब कोई प्रतिकार नहीं है, कोई उपचार नहीं है।

पीछे से मेरे कंधे पर एक स्पर्श का अहसास हुआ। मुड़कर देखा मेरे दिवंगत पिताश्री खड़े थे, बढ़ी हुई दाढ़ी, लम्बे नख-केश। मैं उनसे लिपटकर रो पड़ा

बेटे, मुक्ति का मार्ग कहीं नहीं है। इसी धरा पर जीवन एवं उसके बाद भी अपनी अधूरी जिन्दगी के पलों को बताना पड़ता है। यूं ही भटकना पड़ता है। हमें किसी को कोई अधिकार नहीं है जिन्दगी से मुंह-मोड़ने का यदि यह भूल जो तुम कर आये हो उसे कोई करता है तो उसे अपनी अधूरी आयु को पूरा करने के लिए इस मृत्यु लोक में भटकना ही पड़ता है। अब स्वयं देखो मेरा अधूरा जीवन मुझे अब भी भोगना पड़ रहा है। शून्य में विलीन होने से पहले तक। यदि जीवन के साथ होते तो अपने अधूरे-जीवित संसार को सम्हालते पर अब तो....

–विनय कुमार शुक्ल
मो० : 7359426089
ईमेल : binayshukla12@gmail.com

तेरे आने से भला तेरा न आना निकला

● अमिताभ "मीत"
amianuta@gmail.com

तेरे आने से भला तेरा न आना निकला
दर्द तो वो ही है, कम होने का ख़तरा न रहा

तू मेरे पास थी तो कुर्बतें तो थीं लेकिन
न जाने कौन सा डर मुझ पे छाया रहता था
न जाने किन ग़मों का दिल पे साया रहता था
अब मेरे दिल की वुस'अतों का दायरा न रहा
तू जुदा क्या हुई हर दर्द पुराना निकला

तू मेरे पास थी तो आँखों में थे ख़्वाब ही ख़्वाब
हर एक ख़्वाब पे जन्नत का गुमाँ होता था
कितने डर, कितनी बदगुमानियों में जीता था
अब किसी आसरे का दिल को आसरा न रहा
एक तेरा जाना हर उम्मीद का जाना निकला

तू मेरे पास थी जब, तुझ से प्यार कर न सका
या शिक़ायत ही रही या कोई दिल का अरमाँ
अब जो तू छोड़ गई मुझको इस क़दर तनहा
कब ख़ुदा से हुआ वाकिफ... कि जब ख़ुदा न रहा ?
तेरा जाना ही तेरा मुझमें समाना निकला!!

दिल मिरा बेकरार हो जैसे

● हरदीप बिरदी "लुधियाना"
मो० 9041600900

दिल मिरा बेक़रार हो जैसे
जीत जाना भी हार हो जैसे

मुझसे मिलता है इस तरह अक्सर
सिर्फ मेरा ही यार हो जैसे

राज कहता है इस तरह आखिर
मुझ पे ही ऐतबार हो जैसे

इस तरह जिन्दगी में शामिल है
मरुस्थल में बहार हो जैसे

बरसों पहले नजर मिलाई थी
आज तक वो खुमार हो जैसे

दिल भी तोड़ा है इस तरह बिरदी
वक्त की यह भी मार हो जैसे

क्या आपको लगता है
यह पत्रिका नियमित छपनी चाहिए
अगर हाँ तो हर तरह के सहयोग
के लिए हाथ बढ़ाएं
इस माह हाथ बढ़ाने वाले
नीरज पाण्डे **रवी साव**
सर्वेश राय **ब्रजेश बागड़ी**

आगे आएं हाथ बढ़ाएं

आपको पत्रिका अच्छी लगी हो तो

- नियमित पढ़ने के लिए – सदस्य बनें
- स्तरीय पत्रिका लगे – रचनाएं भेजें
- पुराने सदस्य हैं - नवीनीकरण कराए
- किसी गतिविधि को बढ़ाना है– हमें लिखें
- कोई असाध्य रोग है– कोलकाता आएं।
- कोई योजना है– हमें लिखें

गंगासागर/पुरी/दार्जिलिंग/सिक्किम/ उत्तर पूर्व जाना है– हमारे विशेषांक पढ़ें।

साहित्य

नदी गुमसुम क्यों हो गयी ?

– ज़करिया तामेर

85 वर्षीय ज़करिया तामेर सीरिया के दुनिया भर में लोकप्रिय कथाकार हैं जिनकी रचनाएं अनेक भाषाओं में अनूदित हुई हैं, अंग्रेजी में उनके तीन कहानी संकलन प्रकाशित हुए। वे कहानी को साहित्यिक अभिव्यक्ति का सबसे मुश्किल स्वरूप मानते हैं और मानव त्रासदी और शोषण को अपनी रचनाओं का मुख्य स्वर बनाते हैं। उनकी कुछ कहानियाँ तो तीस चालीस शब्दों तक सीमित हैं। मैंने जकरिया तामेर की अनेक कहानियों के अनुवाद किये हैं। वर्तमान कहानी भले ही फ़ेबल जैसी लगती हो पर विषय वस्तु के दृष्टिकोण से भारतीय समाज में सिर उठा रही असहिष्णुता और तलवार भाँजी पर सटीक टिप्पणी करती है– हमारी पीढ़ी का दायित्व है कि नदी हताश होकर गुमसुम होने का फैसला करे इससे पहले सक्रिय संघर्ष छेड़ के आततायी को भगाने का संकल्प लें। – प्रस्तुति : यादवेन्द्र

एक समय था जब नदी बात करती थी.... जो बच्चे उसके किनारे पानी पीने या हाथ मुँह धोने आते उनसे नदी खूब घुलमिल कर बातें करती। वह अक्सर बच्चों को छेड़ने के लिए उनसे सवाल करती : "अच्छा बोलो, धरती सूरज के चारों ओर घूम रही है.... या सूरज धरती के चारों ओर ?"

पेड़ों की जड़ें सीचना और उनके पत्ते हरे भरे बनाये रखना नदि को अच्छा लगता था.... गुलाब मुरझा न जाएँ इसको ध्यान में रखना और दूसरे देशों तक उड़कर जाने वाले परिंदों की यात्रा शुरू करने से पहले प्यास बुझाना उसको बहुत भाता था। बिल्लीयों के साथ वह खूब छेड़छाड़ भी करती जब वे नदी के किनारे आकर पानी उछालते हुए उधम करतीं।

एक दिन सारा मंजर बदल गया, पथराई शक्ल वाला एक आदमी तलवार लेकर वहाँ आ पहुँचा और अकड़ कर बैठ गया कि उसकी इजाज़त के बगैर कोई भी नदी का पानी नहीं पियेगा – चाहे बच्चे हों, पेड़ पौधे हों, गुलाब हों या कि बिल्लियाँ हों। उसने फ़रमान सुनाया कि अब से नदी का मालिक सिर्फ़ वह है कोई और नहीं।

नदी तुमक कर बोली : मैं किसी की मिल्कियत नहीं हूँ।

एक बूढ़ा पक्षी बोला: इस धरती पर कोई प्राणी ऐसा नहीं जन्मा है जो दावा करे कि नदी का पूरा पानी मैं पी जाऊँगा।

पर तलवारधारी व्यक्ति किसी को सुनने को तैयार नहीं था – नदी या बूढ़े पक्षी की बात का उसपर कोई असर नहीं हुआ। भारी भरकम रोबीली आवाज में उसने हुक्म दिया : अब से नदी का पानी जो भी पीना चाहेगा उसको मुझे सोने की एक अशर्फ़ी देनी पड़ेगी।

सभी परिन्दे मिलकर बोले : हम तुम्हें दुनिया के सबसे खूबसूरत गीत गाकर सुनायेंगे।

आदमी बोला : मुझे दौलत चाहिए, संगीत तुम अपने पास ही रखो... मुझे नहीं चाहिए।

पेड़ बोले : हम अपने फलों की पहली फसल तुम्हें दे देंगे।

आदमी अकड़ कर बोला : जब मेरा मन करेगा फल तो मैं वैसे भी खाऊँगा ही....देखता हूँ मुझे कौन रोकता है।

गुलाब एक स्वर में बोले : हम अपने सबसे सुन्दर फूल तुम्हें दे देंगे।

आदमी ने जवाब दिया : कितने भी सुन्दर हों पर मैं उन फूलों का करूँगा क्या ?

बिल्लियाँ बोली : हम तुम्हारे मनोरंजन के लिए तरह तरह के खेल खेलेंगे... और रात में तुम्हारी देखभाल भी करेंगे।

आदमी को गुस्सा आ गया : खेल कूद से मुझे सख्त नफ़रत है.... और रही मेरी हिफ़ाजत की बात तो यह तलवार ही मेरा पहरेदार है जिसका मैं भरोसा करता हूँ।

अब बच्चों की बारी थी, बोले : हम वह सब करेंगे जो तुम कहोगे।

बच्चों की ओर हिकारत से देखते हुए आदमी बोला : तुम सब मेरे किसी काम के नहीं मरपिल्लों.... तुम्हारे बदन में कोई जान नहीं है।

साहित्य

उसकी बातें और धिक्कार सुनके सबके सब मुँह लटका कर एक तरफ खड़े हो गए, पर आदमी बोलता रहा : बात एकदम पक्की है, नदी का पानी जिसको भी पीना हो वह मुझे सोने की अशर्फी दे और पानी पी ले।

एक नन्हा पक्षी प्यास से बेहाल हो रहा था और वह सब्र नहीं कर पाया, उसने नदी का पानी पी लिया। आदमी उसके पास आया, कसकर उसको मुट्ठी में मसलने लगा और फिर तलवार से टुकड़े-टुकड़े काटकर जमीन पर फेंक दिया। उसकी दरिंदगी देखकर गुलाबों को रुलाई आ गयी, पेड़ रोने लगे। पक्षी भी अपना धीरज खो बैठे, बिल्लियाँ भी स्यापां करने लगीं.... बच्चे भी भला कहाँ पीछे रहते वे भी जोर जोर से रोने लगें। उनमें से कोई नहीं था जिसके पास एक भी अशर्फी हो, और पानी के बगैर उनका जीवन बचना असंभव था और तलवारधारी आदमी था कि अपनी जिद पर कायम था, पानी तभी मिलेगा जब सोने की अशर्फी के तौर पर उसकी उसकी कीमत मिलेगी। देखते ही देखते गुलाब मुरझा गए, पेड़ पौधे सूख गए, पक्षी जान बचाने की खातिर जहाँ तहाँ चले गए, हँसते खेलते बच्चे और बिल्लियाँ सब वहाँ से गायब हो गए। इस दुखभरी विरानी ने नदी को इतना हतोत्साहित किया कि उस दिन से उसने अपना मुँह सी लिया– उसने फैसला किया कि अब वह बोलेगी नहीं पूरी तरह गुमसुम रहेगी।

कुछ दिन ऐसे विराने बीते पर बच्चों बिल्लियों गुलाबों पेडों और पक्षियों को प्यार करने वाले लोग वहाँ लौट आये– उन्होंने तलवारधारी आदमी के साथ लड़ाई की और उसको मिलजुल कर मार भगाया। उन्होंने नदी का पानी पहले जैसा सबके लिए मुहैय्या करा दिया – बगैर कोई कीमत अदा किये सब उसका पानी पी सकते थे। पर सब कुछ बदल जाने के बाद भी नदी की आवाज नहीं लौटी। लोगों ने बहुतेरा हौसला दिया पर नदी बीच बीच में अचानक घबरा कर थरथराने लगती है– उसके मन में तलवारधारी का खौफ गया नहीं। .... नदी को लगता है कभी भी वह आततायी लौट आएगा।

– विजय गौड़, 947409529

"साहित्य और इतिहास का अन्तर्सम्बन्ध तथा ग्रामीण इतिहास की जरूरत"

15 अक्टूबर शाम 4 बजे बंगीय हिन्दी परिषद् में "साहित्य और इतिहास का अन्तर्सम्बन्ध तथा ग्रामीण इतिहास की जरूरत" विषय पर एक विशेष गोष्ठी का आयोजन किया गया। प्रमुख वक्ता रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय के इतिहास के प्रोफेसर और साहित्यकार डॉ० हितेन्द्र पटेल ने कहा कि इतिहास अतीत को समझने का एक विशेष दृष्टिकोण है। इतिहास को साहित्यकार, समाजशास्त्री, राजनीतिशास्त्री, समाज आदि अपने अपने तरह से देखता और समझता है। इतिहास एक मॉडर्न कांसेप्ट है और यह एक खास तरह के कॉन्सेप्ट और स्ट्रक्चर के तहत निर्मित हुआ है जो यूरोपीय कांसेप्ट है। इतिहास वहाँ खतरनाक रूप धारण कर लेता है जहाँ वह खाश तरह की विचारधारा का शिकार हो जाता है। अकादमीय (कैंपस) इतिहास लेखन की यही दिक्कत रही है और इसी कारण वह समाज से कटता चला गया है। समाज और समय को समग्रता में देखने और पकड़ने के लिए उसके टूल्स नाकाफी सिद्ध हो गए हैं। अब यह समय आ गया है कि हम इतिहास को थोड़ा मुकम्मल बनाने के लिए साहित्य, समाज, संस्कृति आदि से रचनात्मक संबंध बनाए और उनसे एक गहरा रिश्ता कायम करें। उन्होंने मिथकीय चरित्रों को ऐतिहासिक चरित्र के रूप में लिए जाने का विरोध किया और कहा कि इतिहास के समय को लेकर मिथकीय समय में प्रविष्ट होना खतरनाक है। मिथकीय कृतियाँ एक समय में एक लेखक द्वारा नहीं रचित होती। उन्होंने जोर देकर कहा कि हर पीढ़ी को अपना इतिहास लिखना चाहिए तभी इतिहास का बना बनाया यूरोपीय ढांचा टूटेगा और इतिहास के दायरे का विकास होगा। इसमें अब लोक को, लोक के साहित्य को और उसके नजरिये को शामिल करने का समय आ गया है। गोष्ठी में डॉ० प्रफुल कोलख्यान, डॉ बलवंत सिंह, सदीनामा सम्पादक जीतेन्द्र जितांशु, डॉ वीरेन्द्र सिंह, प्रियंका सिंह, सृष्टि सिंह, जीवन सिंह, सर्वेश राय, पीयूषकान्त राय, प्रदीप ठाकुर, पूजा मिश्र, मिनाक्षी सांगानेरिया सुषमा पटेल आदि मौजूद थे। गोष्टी का आरम्भ परिषद के मंत्री डॉ राजेन्द्रनाथ त्रिपाठी के वक्तव्य से हुआ। मंच का संचालन परिषद के उपसभापति डॉ सत्यप्रकाश तिवारी ने किया और धन्यवाद ज्ञापन परिषद के संयुक्त मंत्री कुमार संकल्प ने किया।

यात्रा-संस्मरण

एक साहित्यकार का यात्रा वृतांत
आने वाली पीढ़ी इन खंडहरों को देखकर कभी यकीन नहीं करेगी कि स्पार्टा कभी क्या था ?

गौरया, शेर, हाथी तो अभी दिखते हैं लेकिन गूगल बाबा की दया से कई देश नक्शे से गायब हो सकते हैं हालिया उदाहरण फिलिस्तीन का है। हमने यही ध्यान में रखते हुए प्रसिद्ध लेखिका माला वर्मा से बात की। उनकी कई पुस्तकें हैं यात्राओं पर। इन यात्रा वृतांतों के कुछ अंश हम अपने पाठकों तक पहुँचा रहे हैं। पिछली बार पढ़ा"आइए मलयेशिया-सिंगापुर थाइलैंड चलें" से। इस बार उनकी दूसरी पुस्तक "ग्रीस और दुबई से" – **सम्पादक**

माला वर्मा

हुकुमचन्द जूट मिल, पोस्ट : हाजीनगर, जिला : उत्तर 24 परगना,
मोबाइल : 09874115883/9007744346 E-mail : verma_mala2004@yahoo.com

स्पार्टा (Sparta) एथेंस से 250 किलोमीटर दूर ग्रीस के पेलोपोनीज में दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यह एक छोटा सा शहर है इसकी चर्चा मीडिया में कम ही सुनने में आती है, मगर ग्रीस के प्राचीन इतिहास में स्पार्टा लगभग हर जगह छाया हुआ था। वजह केवल एक थी– यहां के लोगों की जमीनी लड़ाई में सर्वोच्च योग्यता। स्पार्टा के लोग इन दिनों इतने हट्टे-कट्टे तथा द्वंद्व युद्धों में निपुण थे कि उनके इस चारित्रिक विशेषता को अंग्रेजी भाषा में 'स्पार्टन' (Spartan) शब्द के रूप में अपना लिया। जिसका अर्थ है साहसी और दिलेर। और आज भी ये शब्द किसी के लिए प्रयुक्त किया जाये तो यही समझिए – वो कोई बहादुर है।

स्पार्टा की भौगोलिक स्थिति कुछ इस प्रकार है– पश्चिम में 'टेगीटौस' (Taygetos) तथा पूरब में 'पारनॉन' (Parnon) की पहाड़ियों से घिरा है। इसके बीच की घाटी में एक नदी 'यूरोटास' (Eurotas) बहती है और इसके आसपास सैकड़ों वर्गमील में फैली हुई उपजाऊ भूमि है। इस भूमि में कभी बहुत ज्यादा पैदावार हुआ करती थी, जिसे स्पार्टावासी ग्रीस के अन्य सिटी स्टेट्स (नगर राज्य) को बेचा करते थे तथा यह स्पार्टा के समृद्धि का मुख्य जरिया था। इन दो पहाड़ों के बीच में घिरा स्पार्टा दुश्मनों से भी सुरक्षित रहता था। इन पहाड़ियों के चलते यहाँ एक प्राकृतिक किलेबंदी हो गई थी। आज भी आपको स्पार्टा में किसी किले का खंडहर नहीं दिखेगा। खंडहर अगर दिखता है तो वह स्टेडियम, जिम्नेजियम या अन्य भवनादि के होते हैं।

टैगीटौस का पहाड़ बहुत ऊँचा तो नहीं, मगर ऊँचाई इतनी जरूर है कि सर्दियों में यहाँ बर्फ जम जाती है। गर्मी के दिनों में भी यह बर्फ पिघलती नहीं और यह बराबर दिखती रहती है। इस क्षेत्र में इस पहाड़ को देखना भी अपने आप में एक अनुभव है और बहुत से लोग तो इन पहाड़ों में ट्रेकिंग, स्कीइंग करने के लिए आते हैं। पारनॉन की पहाड़ियों में ऐसी बात नहीं मगर इनकी गोद में बसे स्पार्टावासियों को प्रकृति ने वो सब कुछ दे दिया है जो एक अच्छे शारीरिक बुलंदी के लिए जरूरी होता है। सुखद जलवायु तथा उच्चकोटि के फल-फूल और खाद्यान्न। यहाँ के लोगों ने प्रकृति के इस देन का भरपूर उपयोग किया और अपने को इतना बलशाली बनाया कि इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में अपना नाम दर्ज करा लिया। मुझे अभी भी याद आता है अपनी छठी-सातवीं कक्षा के इतिहास की पुस्तक में एथेंस व स्पार्टा के युद्ध का चार-छह पंक्तियों में सक्षिप्त विवरण तथा उसके बगल में एक स्पार्टन सैनिक का अपने पूरे लड़ाकू वेश में जिरह बख्तर के साथ छपी एक तस्वीर। इस तस्वीर को किसी चित्रकार ने

यूं ही जैसे-तैसे बना दी थी जो स्पार्टन चरित्र से जरा भी मेल न खाती थी। आज उसी पुरानी तस्वीर को स्पार्टा की जमीन पर खड़े होकर याद कर रही थी। आश्चर्य की बात है, कहां तो कमजोर शरीर और कहां ये बहादुर कद्दावर सैनिकों की मूर्तियां।

प्राचीन ग्रीस के इतिहास की चर्चा करते हैं तो बौद्धिक पराक्रम में जहाँ एथेंस का नाम आता है, वहीं शारीरिक पराक्रम में स्पार्टा का। स्पार्टा ने शारीरिक शक्ति ऐसे ही नहीं हासिल की थी। इसमें वर्षों की साधना लगती थी। स्पार्टन लड़कों को सात वर्ष की उम्र में ही मिलिट्री स्कूल में दाखिल होना पड़ता था। वहां उन्हें कठोर शारीरिक अनुशासन में रखकर युद्ध कलाएं सिखायी जाती ती और जब बच्चे बड़े हो जाते थे तब वे लड़ाइयों में शरीक होते थे।

स्पार्टा से थोड़ी दूर पर एक प्राचीन मंदिर का खंडहर है जिसे 'आर्टीमिस ओर्थिया' का मन्दिर कहते हैं। यहाँ के मठ में स्पार्टन लड़कों की सहनशीलता की शिक्षा दी जाती थी। इसके लिए कोड़ों से मारा जाता था ताकि साहस व सहन करने की शक्ति बढ़े। आजकल उस स्थान पर कुछ भी नहीं है। रोमन लोगों द्वारा उस जगह को परिवर्तित कर कुछ और ही बना दिया गया है। सुनने में आया कि वहां जिप्सी लोगों या कहें बंजारा जीवन जीने वालों की भीड़ रहती है और उनके बच्चे भीख मांगते हुए गुजारा करते हैं। पर्यटकों का वहाँ ना-जाना कम होता है। ये बंजारा लोग वहां पहुँचे पर्यटकों को तंग भी करते हैं, शायद इसीलिए मैरियाना ने हमें इस स्थान के बारे में बताया जरूर मगर वहाँ ले जाना मुनासिब नहीं समझा।

इन स्पार्टन युवकों को मानसिक रूप से कुछ इस तरह तैयार किया जाता था कि उन्हें युद्ध क्षेत्र से हारकर लौटना गंवारा न था। वे बड़े-बड़े ढाल (शील्ड) लेकर युद्ध में जाते थे और उन्हें यही निर्देश दिया जाता था, "या तो ढाल हाथ में लेकर यानि जीतकर आओ या ढाल पर यानि मृत होकर (Come back with your shield or on it)।

युद्ध में निपुण लम्बे-चौड़े, हट्ठे-कट्ठे इन नौजवानों को देखते ही बनता था। ये शौकिया अपने बाल लम्बे रखा करते थे और उन दिनों स्पार्टावासियों के लिए एक फैशन बन गया था। ये फुल-टाइम सिपाही थे यानि ये हरदम युद्ध के लिए तैयार मिलते थे। युद्ध की खबर मिली नहीं कि कूच। उन दिनों के धनी मानी लोग अपने बच्चों को शौक से इन सैनिक स्कूलों में भेजा करते थे। फिर स्पार्टा के खेत-खलिहानों में या अन्य कार्यों को कौन करता था ? इसके लिए हजारों गुलाम स्पार्टा में थे। इन्हें 'हेलोट्स' (Helots) कहा जाता था। ये हेलोट्स कुछ नहीं ग्रीस के अन्य हिस्सों के युद्धबंदी हुआ करते थे। स्पार्टा जहाँ से भी जीतकर लौटता था, इन युद्धबंदियों को साथ लाता था जो राज्य के खेत-खलिहान और घर-गृहस्थी के कामों तथा भवन-निर्माण आदि अन्य कई कार्यों को किया करते थे। इस तरह स्पार्टा के लोगों को निश्चिन्त मन से युद्ध की तैयारी या युद्ध में जाने का मौका मिलता था।

अब इन युद्धों में आना जाना दो-चार दिनों की बात तो थी नहीं, महीनों या वर्षों लग जाते थे और जाने वाला सिपाही जीवित लौटेगा की नहीं इसमें भी हमेशा संदेश बना रहता था। इन बातों को स्पार्टा के महिलाओं में हमेशा एक आतंक व चिन्ता बनी रहती थी। पुरुष वर्ग युद्ध में शरीक होने में अपने को हीरो समझता था, मगर महिलाएं अपने पति और बच्चों की मृत्यु की आशंका से भयभीत रहती थी। इतिहास में कई बार ऐसा हुआ है कि इन महिलाओं ने इसके खिलाफ बगावत कर स्पार्टन सिपाहियों को युद्ध में जाने से रोका मगर ये लड़ाके कहां मानने वाले थे। यहाँ ट्रोजन वार की कहानी भी आती है। हेलेन का पति मेनेलॉस स्पार्टा के पास ही रहता था और जो लगभग दस वर्ष अपने बड़े भाई अगामेमनन के साथ वर्षों तक ट्रॉय की घेराबंदी किये रहा।

ऐसे ही एक लड़ाई का हीरो स्पार्टा का सेनापति लीओनीडास था। सन् 580 ईसा पूर्व में पर्सिया ने ग्रीस पर हमला किया।ये हमला ग्रीस के उत्तरी भाग में एथेंस के नजदीक स्थित 'थर्मोपाइली' (Thermopylae) में हुआ। ये ग्रीस की एक सम्मिलित सेना थी, जिसमें लीओनीडास अपने तीन सौ स्पार्टन सैनिकों को लेकर इस युद्ध में शामिल हुआ था। पर्सिया के विशाल सेना

के सामने ग्रीस के पाँव उखड़ने लगे और पर्सियन बड़ी मुश्किल से ग्रीस (एथेंस) पर कब्जा कर पाया, क्योंकि उसकी मुश्किलें लीओनीडास के सिपाहियों ने बढ़ा दी थी।

हुआ यूं कि पर्सिय सेना को एक दर्रे से पार करना था और यह एथेंस के लिए एक शार्टकट था। लीओनीडास ने अपनी मुट्ठी भर सैनिकों को लेकर इस विशाल सेना का मुकाबला किया। तीन सौ सैनिकों की इस छोटी टुकड़ी ने पर्सियन सेना को काफी नुकसान पहुँचाया। ये सारे स्पार्टन युद्ध में मारे गये। लीओनीडास भी मारा गया मगर उसकी बहादुरी की चर्चा आज भी की जाती है। कई जगह लीओनीडास की मूर्तियां लगाई गई हैं, इस घटना पर हालीवुड ने एक फिल्म बनायी ती जिसका नाम ही था '300' (तीन सौ)। इस फिल्म ने काफी धूम मचायी और टिकटों की रिकार्ड बिक्री हुई थी। एक सौ तीस मिलियन डॉलर की कमाई मात्र दस दिनों में हुई थी। यहां बता दू इस फिल्म को संयोग से मैंने ग्रीस से लौटने के बाद टीवी पर देखा और अभिभूत हो उठी। चूंकी उसी स्थान से घूमकर ताजा लौटी थी और वो भी इतनी प्रसिद्ध फिल्म आराम से घर बैठे देखने को मिलेगा, ऐसा तो सोचा ही न था। जिन पात्रों को स्पार्टा ने बतौर स्टैच्यू देखा, फिल्म में वही पात्र बहादुरी से लड़ते हुए दिखे। स्पार्टा का वो प्राचीन माहौल, युद्ध कौशल आदि की सही-सही झलक इस फिल्म में देखने को मिली। इन खंडहरों को देखने के बाद फिल्म में जीते जागते स्पार्टा को भी देख लिया।

उन दिनों ग्रीस में सिटी स्टेट्स सैकड़ों थे मगर एथेंस व स्पार्टा ही इनमें सबसे प्रमुख थे। पूरे ग्रीस का एक ही शत्रु था और वह था 'पर्सिया'। इजियन सी में फैले सैकड़ों द्वीपों को लेकर ग्रीस और पर्सिया में ठनती रहती थी और पर्सिया की विशाल सेना ग्रीस की मुख्य भूमि पर भी धावा बोलती रहती थी। ये हमले मुख्यत: एथेंस की तरफ से होते थे। एथेंस आसपास के सिटी स्टेट्स से सामरिक सहायता चाहता था, मगर स्पार्टा इसमें आनाकानी किया करता था। याद करें मैराथन की लड़ाई जहाँ मदद देने से स्पार्टा ने साफ इनकार कर दिया था।

ग्रीस में अपनी प्रभुता बढ़ाने के चक्कर में स्पार्टा और एथेंस में लगभग पैंतीस वर्षों तक युद्ध होते रहें। कभी जीत तो कभी हार का सिलसिला चलता रहा। आखिरकार युद्ध में स्पार्टा की जीत हुई और पूरे ग्रीस का अधिकार स्पार्टा को मिल गया। मगर स्पार्टा का रंग-ढंग ग्रीसवासियों को पसंद नहीं आ रहा था क्योंकि वे शारीरिक विकास पर नहीं बल्कि मानसिक विकास पर जोर देने के आदि हो चुके थे। एथेंस के बुद्धिजीवियों का प्रभाव पूरे ग्रीस पर इस कदर छाया हुआ था कि स्पार्टा को लोगों ने तिरस्कृत कर दिया और स्पार्टा की प्रसिद्धि धीरे-धीरे धूल-धूसरित होने लगी थी। अब स्पार्टन लोगों ने एथेंस के जीवन शैली को ही अपनाना शुरू कर दिया।

जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है एथेंस पर स्पार्टा के विजय के बाद भी एथेंस अपनी पुरानी समृद्धि की तरफ नहीं लौट पाया। वहाँ के सैनिक भी अब सुस्त नजर आने लगे थे। ये सुस्ती उतनी भी नहीं थी की कोई उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचा दे। एलेक्जेण्डर के पिता फिलिप द्वितीय ने अपने ग्रीस विजय के अभियान के दौरान स्पार्टा में घुसने के पहले वहाँ एक दूत भेजा, यह लिख कर – "यदि मैं स्पार्टा में घुसा तो उसे मिट्टी में मिला दूंगा..." जिसके जबाव में स्पार्टन लोगों ने सिर्फ 'यदि (If)' लिखकर भेजा। अर्थात् 'यदि' घुस पाओगे तभी तो मिट्टी में मिलाओगे। फिलिप ने इस बात को गंभीरता से महसूस किया और वह स्पार्टा की तरफ मुखातिब नहीं हुआ। उसने पूरे ग्रीस को मिलाकर एक बड़ी सेना बनायी ताकि पर्सिया पर हमला किया जा सके या पर्सिया को बढ़ने से रोका जा सके। मगर इस सेना ने स्पार्टा को अलग रखा गया, क्योंकि स्पार्टा इस सेना का नेतृत्व चाहता था।

इस बीच एलेक्जेण्डर का प्रादुर्भाव हुआ। एलेक्जेण्डर (सिकन्दर) पूरे ग्रीस पर कब्जा करने चला ता, मगर स्पार्टा की बहादुरी से वह परिचित था। वह जानता था यहां उलझने पर स्पार्टा हारेगा तो जरूर मगर एलेक्जेण्डर की सेना को काफी नुकसान पहुँचाकर, और ऐसा हुआ भी। उन दिनों स्पार्टन राजा एजिस तृतीय (Agis III) के साथ एलेक्जेण्डर

की सेना के जनरल एंटीपेटर (Antipater) के साथ 'क्रीट' में जबरदस्त मुकाबला हुआ। इसमें लगभग साढ़े पाँच हजार स्पार्टन मारे गए। एलेक्जेण्डर की विशाल सेना अब तक एक तरफा विजय हासिल करती आ रही थी, मगर स्पार्टन सैनिकों ने हारने से पहले उनके साढ़े तीन हजार सैनिकों को मार डाला। पूरे ग्रीस पर एलेक्जेण्डर का कब्जा हो गया और स्पार्टा की बहादुरी व दिलेरी को लोग धीरे-धीरे भूलने लगे।

सन् 1829 ईस्वी में ग्रीस आजाद हुआ और सन् 1833 में प्रिंस ओटो (Otto) यहाँ का राजा बना। ओटो स्पार्टा की बहादुरी को भूला न था। लगभग गुमनामी में जा चुके स्पार्टा को ओटो ने फिर से नये ढंग से संवारा। आज के आधुनिक स्पार्टा की सड़कें ओटो के प्लान के अनुसार हैं। आज स्पार्टा में प्राचीन अवशेषों के नाम पर वहाँ के एक्रोपोलिस के कुछ टूटे-फूटे थियेटर, जिम्नेजियन दिखते हैं जो देखने में अति साधारण लगते हैं। उन्हें देखकर स्पार्टा के समृद्धशाली इतिहास का अंदाजा लगाना मुश्किल है। एक प्राचीन यूनानी इतिहासकार के अनुसार आने वाली पीढ़ी इन खंडहरों को देखकर कभी यकीन नहीं करेगी कि स्पार्टा कभी क्या था ? और... यह सही भी है।

दिनकर के काव्य में द्वंद

द्वंद्व दिनकर के काव्य-जीवन के पग-पग में घटित है। या कहें कि उनकी भावना और चिंतन का कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं है। यह द्वंद्व उनकी रचना में भावों का गुंफन पैदा करता है, विषय-वस्तु के प्रत्येक क्षेत्र में भरमाता है और बेचैन करता है। दिनकर का कवि इस गंभीर संकट से जूझता है, उबरता है जिसमें उनकी काव्य-साधना उसकी चुनौतियों को स्वीकार करती है और फिर उसका समाधान भी प्रस्तुत करती है।

उसका "कुरुक्षेत्र" द्वंद्व की (1946) एक सर्वाधिक समर्थ अभिव्यक्ति है जो युद्ध और शांति, हिंसा और अहिंसा, प्रवृत्ति और निवृत्ति की जीवन की जीवन शैली तथा विज्ञान और आत्मज्ञान की परिणति में निहित है। उसके पूर्व "द्वंद्व-गीत" (1940) नाम से ही स्पष्ट है। "उर्वशी" (1961) तो अप्सरा और लक्ष्मी, संशययुक्त मानव और संशयरहित देवता एवं काम और अध्यात्म के द्वंद्वो की अप्रतिम गाथा है। जहाँ तक शिल्प और छंद का प्रश्न, अपनी आंतरिक प्रकृति के अनुकूल शिल्प के परम्परागत बंधन को वे स्वीकार नहीं करते। सायास छंद योजना की अपेक्षा भावानुकूल छंद योजना दिनकर को प्रिय है। इसी कारण परम्परा-प्राप्त छंदों के स्थान पर नये छंदों के निर्माण की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखते हैं कि–"अब वे ही छंद कवियों के भीतर से नवीन अनुभूतियों को बाहर निकाल सकेंगे जिसमें संगीत कम, सुस्थिरता अधिक होगी, जो उड़ान की अपेक्षा चिन्तन के उपयुक्त होंगे। क्योंकि हमारी मनोदशाओं की अभिव्यक्ति वे छंद नहीं कर सकेंगे जो पहले से चले आ रहे हैं।

दिनकर मानते हैं कि–"कविता के नये माध्यम यानी नये ढांचे और नये छंद कविता की नवीनता के प्रमाण होते हैं। उनसे युगमानस की जड़ता टूटती है, उनसे यह आभास मिलता है कि काव्याकाश मं नया नक्षत्र उदित हो रहा है। जब कविता पुराने छंदों की भूमि से नये छंदों के भीतर पाँव धरती है, तभी यह अनुभूति जगने लगती है कि कविता वहीं तक सीमित नहीं है जहाँ तक हम उसे समझते आये हैं बल्कि और भी नयी भूमिया हैं जहाँ कवि के चरण पड़ सकते हैं। नये छंदों में नयी भावदशा पकड़ी जाती है। नये छंदों से नयी आयु प्राप्त होती है।" कविता आज छंद से छूटकर अपने लयात्मक गति और द्वंद्व के साथ जिस रूप में समय के सच को अभिव्यक्त कर रही है, उसके आंदोलन में दिनकर जी की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। आज की कविता रूढ़ि और परम्परा से पूर्णतया मुक्त है। इसमें किसी कवि विशेष का अवदान नहीं, बल्कि कविता को इस भावभूमि तक लाने का श्रेय अन्य कवियों के साथ ही रामधारी सिंह 'दिनकर' को भी जाता है जिन्होंने एक अर्थ में अपने समय को तो शब्द दिये ही, आने वाले समय की कविता के लिए एक पृष्ठभूमि भी तैयार की।

–प्रभात मिश्र
शिक्षक : दून स्कूल
मो० : 7004904161

विचार

सामाजिक शिकंजे में नारी और दलित

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में जन्म लेता है। समाज में जीवन जीने के लिए समस्त क्रिया कलापों को सम्पन्न करते हुए अन्त में निर्वाण को प्राप्त होता है। भारत की सामाजिक व्यवस्था विभिन्नतावादी है। आर्यों ने इस देश को नष्ट भ्रष्ट करने हेतु विभिन्न वर्गों में बाँटा। इनकी देन ही जाति-पाति, छुआछूत, वर्ग भेद, ऊँच नीच, गरीबी, अशिक्षा और नारी शोषण उत्पीड़न ज्यों के त्यों फन उठाए, फुफकार रही है। इन्होंने मूल निवासी शुद्ध जनों को कल, बल, छल और ढोंग अस्त्र द्वारा शूद्र घोषित किया तथा हेय से हेय स्तर पर खड़ा किया। मूलनिवासियों के समस्त अधिकारों को छीन अति नीच बनाया। दलित भूखे, नंगे, प्रताड़ित दुख के आँसू बहा रहे। आजादी के 70 वर्ष बाद भी स्थिति ज्यों की त्यों है। अन्य देश चन्द्र, मंगल और शुक्र ग्रहों पर बस्तियाँ बसाने जा रहे हैं। हम भारतवासी जाति-पाति, घृणा, द्वेष और नारी शोषण में ऊर्जा खर्च करते हैं। देश, समाज विकास के वास्तविक निर्माता श्रमिक और नारी हैं। इन्हीं के ऊपर सम्पूर्ण समाज खड़ा विहस रहा है। इनके श्रम और पोषण का मूल्य शून्य है। धरा के गर्भ में फावड़े और हथौड़े की चोट चिन्ह आज भी पड़ें। उसी नींव पर समाज खड़ा है फिर भी दोनों उपेक्षित, तिरस्कृत दुख से आहें भर रहे हैं। आम जनता का श्रम ही समाज की प्रगति, समृद्धि और सुख प्रदान करता है किन्तु श्रमिक भूखा है। गुफा मानव से लेकर आज के इस वैज्ञानिक विकास तक श्रम और संघर्ष की व्यथा कथा अंकित है।

मनुष्य चैतन्यशील प्राणी होते हुए काम, क्रोध, घृणा, द्वेष और धन लोभ में अस्तित्व खो रहा है। अस्तित्वहीन नैतिक पतन की ओर अग्रसर है। मनुष्य का जन्मजात स्वभाव है दूसरों को पैरों तले कुचल कर शासन करना। कुचलने और शासन करने की प्रवृत्ति ने घृणा, अहंकार, द्वेष और अनीति को जन्म दिया। अनीति दबंगों को बढ़ावा देती है। इसी के कारण गरीब शोषित और नारियाँ जल और मर रही हैं। हमारा भारतीय समाज अलग-अलग विभिन्न रंग-रूप में अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग अलाप रहा है। विज्ञान, जल, थल और नभ को नाप दिया किन्तु हमारी सोच प्राचीन कुएँ में झाँक रही है।

शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन होता है और शिक्षा, समाज द्वारा प्रभावित होती है। हमारी शिक्षा और समाज, धर्म के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे हैं। आधी आबादी महिलाएं पुरुषों के अधीन, उनकी कृपा पर जीवित हैं। मात्र दो प्रतिशत महिलाएं सम्मान का जीवन जी रही हैं शेष नारकीय जीवन जीने को बाध्य हैं। महिलाओं के ऊपर हिंसक घटनाएं हर पल बढ़ती जाती है। शोषण के नये ढंग दुष्कर्म के नये फंदे बनाए जा रहे हैं। अराजकतत्व, अपराध करने के लिए जैसे-तैसे हर व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। हमारा समाज रीति रिवाज, धर्म, भाषा क्षेत्रियता और वर्ग भेद के नाम पर अलग-अलग बंटा है फलस्वरूप शोषितों पर अत्याचार बढ़ रहे हैं। सामाजिक बिखराव ने समस्याएं बढ़ाने का कार्य किया है। कुछ धार्मिक अंध पुस्तकें भी अराजकता को सह देती हैं। महिलाओं पर अत्याचार घर परिवार से आरम्भ होकर आफिस, सड़क, बस, कार, ट्रक और रेलों में भी निर्भय चल रहे हैं। सुरक्षा के सारे ताने-बाने क्षण में ध्वस्त होते हैं। पुरुष प्रधान समाज के सिकंजे में गाँव की महिलाएं जकड़ी पति परमेश्वर का जाप करती हैं। मजदूर महिलाएं पीड़ा और गरीबी में हर शोषण सहती हैं। शोषण की जड़े सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक विषमताओं में धंश कर ढूढ़नी होगी। पत्नी भूखी प्यासी पति की अधिक आयु की कामना करवा चौथ जैसे अनेक व्रत उपवास द्वारा करती है। कितने पति अपनी पत्नियों के लिए

उपवास करते हैं ? क्या कारण है ? किसी ने कभी सोचा है ? दूरदर्शन, मोबाइल, इन्टरनेट और कम्प्यूटर आदि शिक्षा के मार्ग खोलते हैं किन्तु भारतवासी जिस प्रकार आजादी के अर्थ को स्वच्छन्दता मानकर अनैतिकता को बढ़ावा देते हैं। इसी प्रकार आधुनिक वैज्ञानिक साधनों को गलत अर्थ देने लगे हैं। संचार के साधनों ने हर दीवार तोड़ दी है। ज्ञान-विज्ञान ने जीवन को सुलभ बनाया है किन्तु आडम्बर महिलाओं के पैरों में जंजीर डाल दिया है।

सृजन, पोषण, प्रेम, त्याग और बलिदान की देवी दोयम दर्जे की नागरिक हुई हैं। आज की ज्वलंत समस्या अपमान, दुष्कर्म एवं यौन उत्पीड़न है। समाचार पत्रों में प्राय: देखने को मिलता है अल्प वयस्क बच्चियों संग दुष्कर्म अभद्रता। समाज के पवित्र रिश्ते भी कलंकित हुए हैं। घिनौने कुकर्म ने ज्ञान को लकवा ग्रस्त बनाया है फिर भी मनुष्य सिर उठा समाज में गर्व से घूम रहा। पति की मृत्यु के बाद माताएँ अपमानित घृणित जीवन जीने को विवश हैं। भारतीय विधवाओं का जीवन पेड़ के टूटे पत्ते सा गगन में घूमता है। माताओं का यह रूप आँसुओं का सागर भरता है। निराश्रित माताओं की इच्छाओं पर तुषारापात होता है। उन्हीं का रक्त घृणित दृष्टि से देखता और व्यवहार करता है। थकी, हारी महिला काशी, वाराणसी, हरिद्वार, मथुरा और अन्य धार्मिक अड्डों पर अमानवीय अनैतिक जीवन यापन को विवश होती है। त्याग, तप की मूर्ति का क्या यही ह्श्र होना बाकी था ? हमारी समाज व्यवस्था का सरासर दोष है। विधवाओं की वेदना का कहीं अंत नहीं। खेतों, खदानो, मिल फैक्ट्री, ईंट भट्ठों, भवनों में काम करने वाली नारियाँ रोटी के लिए सब कुछ दाव पर लगायी हैं। घायल या बीमारी की स्थिति में कोई सहायता को आगे नहीं आता।

पाश्चात्य विकसित देशों की नारियाँ शिक्षा के बल पर नभचारी, ज्ञान-विज्ञान की खोज कर रही हैं। भारतीय नारियाँ घूँघट में सुख-सौंदर्य दर्शन करती हैं। हर दिन के त्यौहार एवं ढकोसलों ने महिलाओं को बन्दी बनाया है। वे अपने ही घरों में उपवास रखकर पति के दीर्घायु की कामना करती है। पति की मत्यु बाद विधवाएं काशी, मथुरा में निवास करती हैं। पत्नी की मृत्यु के बाद कितने पति काशी, हरिद्वार में भभूत लगाते हैं और कितने पत्नी के लिए उपवास व्रत रखते हैं ? क्यों दोहरे मापदण्ड समाज में विद्यमान हैं ? प्रत्येक बालिका आगे बढ़ना चाहती है किन्तु सड़ी-गली समाज व्यवस्था अंकुश लगाती है। परिवार के सदस्य इज्जत के नाम पर लीपापोती और हतोत्साहित करते हैं। अधिकांश दुष्कर्म प्रताड़ना के मामले घरों से बाहर निकलने नहीं देते हैं। सूपर्णखा, सीता, अहिल्या, द्रोपदी, जालन्धर की पत्नी सती तुलसी संग कितना अत्याचार हुआ। धर्म के नाम पर क्या सौ खून माफ है ? न्याय के लिए अब किसे याद किया जाए ? दलित और नारियों के लिए चुनौती भरा प्रश्न है। धर्म नाम पर मंदिरों में कुबेर आसन मारे बैठे हैं। आडम्बरों के कारण गंगा मैली हो रही है। आजादी की लड़ाई में नारियों ने अपना सर्वस्व गँवाया, आज वही नारी आजादी के लिए छटपटा रही है। हर तीन मिनट पर एक महिला संग दुष्कर्म-दुराचार होता है और इतने ही दलित श्रमिकों की हत्या होती है। फूलन जन्म ले रही है। समय की मांग है ?

आज जैसे-जैसे ज्ञान विज्ञान का क्षेत्र व्यापक हो रहा है। मन के विचारों को प्रगट करने की आजादी, शिक्षा का अधिकार मिल रहे हैं। नारियाँ अनंत की सैर कर रही हैं। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक राजनैतिक, वैज्ञानिक, कला एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में अपना परचम लहरा रही हैं। खेलों और विद्यालयों में इनकी कोई शानी नहीं है। इनके उत्तीर्ण होने का प्रतिशत बहुत अधिक है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है, परिवर्तन तीव्र गति से हो रहा है। विकास का पथ सदा कर्मशीलों ने निर्मित किया है। हम सब लिंग भेद, जाति भेद, घृणा, द्वेष, हिंसा से ऊपर उठ कर नव निर्माण में जुट जाएं। यही समय की माँग है। परिवर्तन ने ढ़ोगियों द्वारा अत्याचार करने को बाध्य किया है। मुफ्त में मालपुआ खाने वाले धर्म को ऊपर, भारी मान रहे हैं।

विचार

आज विज्ञान का युग है। विज्ञान की कसौटी पर हर वस्तु परखी जायेगी। झूठी मान्यताओं, कल्पनाओं और कुरीतियों का नाश होगा। उपभोक्तावादी संस्कृति नारी को भोग की वस्तु बना रही है फिर भी नारी जागरण हो चुका है। भ्रूण हत्या, दहेज हिंसा, आफिसों में शोषण, अनाचार का विरोध करती हुई नये समाज की रचना में झूठी मान्यताओं को ठोकर मार नये क्षितिज का निर्माण कर रही हैं। शिक्षा ने चेतना मार्ग खोल दिया है। सूरज निकल आया है। पति परमेश्वर नहीं साथी है। जीवन रथ को चलाने वाले दो शक्तिशाली पहिए हैं।

समय, समाज, इतिहास और विकास के निर्माता श्रमिक शोषित हैं। इनके श्रम पर समाज का ढ़ाचा खड़ा है। देवासुर संग्राम नित्य चल रहे हैं। सघर्ष से ही नया पथ निकलेगा। जिनके पास जीवन जीने के साधन खेतीबारी, भूमि, रोजी-रोटी और शिक्षा नहीं है। शिक्षा के अभाव में पुरानी मान्यताओं स्वर्ग के झूठे चक्कर में गन्दे कार्य करते हैं। ऐसे श्रमिकों पर अत्याचार दिन दिन बढ़ रहे हैं। इस अत्याचार के अनेक रूप और शिकंजे हैं। भोली जनता को डराने और दाव-पेंच में फँसाते हैं। शिक्षा का व्यापारीकरण तीव्रगति से हुआ है। निजीकरण, पूँजीपतियों ने अशिक्षा और गरीबी को बढ़ावा दिया है। मंहगी शिक्षा गरीबों के वश की बात नहीं है। सरकारी विद्यालयों में शिक्षक अनमयस्क भाव से जातिवादिता के नाम पर शिक्षा दे रहे हैं। ऐसे अध्यापक थोड़े से हैं, जिनके मस्तिष्क में जाति पाति के कीड़े कुलबुला रहे हैं। मानव और मानवता के द्रोही कुछ अराजकतत्व तलवार के बल पर दलितों से पुराने सड़े गले कार्य करने के लिए विवश करते हैं। गरीब श्रमिक रोटी, इज्जत और अधिकार के लिए संघर्ष करता है, मारा जाता है। "मरता क्या न करता" मरने वाला सोचता है मरना ही है तो शस्त्र उठाकर मरो ताकि संसार याद करे। प्रकृति जिसे संवारती है, उसे कौन मिटा सकता है? अभी झंझर गोहना की आग बुझी नहीं कि बारह जुलाई को गुजरात प्रान्त के गिर सोमनाथ जिले के ऊना कस्बा के मोटा समधियाना गाँव की घटना संसार के हृदय को झकझोर दिया। भारत में नंगा नाच देख संसार वालों ने दांतों तले अंगुली चाप लिया। मानवता सिहर उठी। हैवानियता हाथ उठाए, तमतमा उठी। क्रूरता की सीमा छितरा गई। समधियाना गाँव दर्द से कराह उठा। लौह शक्ति ने धरती को रक्तरंजित किया।

मृत पशु गाय की खाल डांगर हड़वार में उतार रहे चार चर्मकारों को गोमाता रक्षकों ने पेड़ से बाँधकर लोहे की छड़ से पीट-पीट रक्तरंजित कर दिया। हथियारबंद गोमाता रक्षकों ने इसकी पूरी विडियो रिकार्डिंग करके इन्टरनेटर के माध्यम से विश्व को परिचित किया। सीनाजोरी ऐसी कि संसार वाले देखों, दलितों पर हमारा शासन आज भी विद्यमान है। पीट-पीट रक्तरंजित युवकों के समक्ष गाँव वालों से कह रहे ते जो भी सिर उठाएगा। गौमाता की खाल उतारेगा, उसे गुजरात से बाहर मार भगाएगे। यह धमकी नहीं आदेश है। गोरक्षा दल के नेताओं ने मानवता को पैरों तले रौंद डाला। संसार लहूलुहान हो गया। हिन्दुत्व बाँहे फड़का उठा, गर्व से मूँछे तन गयी। हाय रे भारत देश।

विडियों रिकार्डिंग इन्टरनेट पर देख दलित समाज जागा और आक्रोश में आन्दोलन रत हुआ। पूरे भारत में आन्दोलन फैल गया। जन आन्दोलन परिवर्तन के लिए अपनी आजादी और अधिकार हेतु कमर कस रहा है। केन्द्र और राज्य सरकारें सोती रही। क्रूरता के पोषक दोषी लोगों को सम्मानित करते सुने गये। उत्तर प्रदेश में दादरी की घटना ने हजारों प्रश्न मनुष्य के समक्ष पैदा किए हैं। वे लोग कौन हैं? जिन्होंने माँस चमड़ा और रक्त का ठेका लेकर डब्बा बन्द विदेशों को निर्यात करते हैं। इस निर्यात से सरकारी कोष में विदेशी मुद्रा नहीं आती होगी? चमड़े से विभिन्न प्रकार के पोशाक, जूते, बैग इत्यादि का निर्माण निरंतर जारी है। जूते और पोशाक केवल मजदूर ही प्रयोग में लाते हैं क्या? यह एक सोचनीय प्रश्न सामने खड़ा है। इन दर्द भरी घटनाओं का भारतीयों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, किन्तु अमेरिका इत्यादि कुछ महान

विचार

देशों में इण्डिया सरकार को सावधान किया, तभी सरकार जागी और उदारवादी मानवता के रक्षक देशों के दबाव में मानव द्रोहियों पर भारी दबाव डाली। गोरखधंधे करने वाले देश-विदेश में नंगे हुए। जिसके रक्त में छल, कपट, घृणा, द्वेष, दुराचार एवं अन्याय समाया है, वे कभी भी सुधर नहीं सकते। नंगे को नंगा क्या? हमारी गन्दी मानसिकता और कुदृष्टि ने मानव और मानवता को पंगु बनाया है। सहिष्णुता को पाला मार दिया है फलस्वरूप नारी और दलितों पर नित्य आक्रमण हो रहे हैं।

गुजरात के दलितों ने महासभा करके सभी गंदे काम छोड़ने का संकल्प व्रत ले लिया, यह बहुत ही गौरव की बात है।

बाबा साहब डॉ० अम्बेडकर का संदेश जैसे-जैसे पहुँच रहा है वैसे-वैसे त्याग, बलिदान भाव उपज रहे हैं। गाँव-गाँव, घर-घर में संकल्प दोहराया, सुनाया, दर्द बयाँ किया जा रहा है। जिस गाय माता के दूध को पीये, मरने के बाद सड़ने दें, या क्रिया कर्म करें। यह दायित्व गोरक्षकों के ऊपर है। भूखों हजारों वर्ष से मरते हैं तो आगे भी मरेंगे, ऐसा होगा नहीं। भूमण्डलीकरण में हमारी आवाज विश्व के कोने-कोने में पहुँचेगी। मानवता के पुजारी सत्य को मरने नहीं देंगे। शिक्षा में ज्ञान का पथ खोला है। घृणित मानसिकता के लोग एक दिन धराशायी होंगे। देश में संवैधानिक विधि व्यवस्था का शासन है तो किसी को मारने-पीटने, बर्बरतापूर्वक जान लेने की छूट अत्याचारियों को किसने दी है? किसने-किसने-किसने? श्रम ईश्वर है। श्रम की आधी रोटी हमें सत्य पथ पर ले जाएगी। एक न एक दिन श्रम की विजय अवश्य होगी। नारियों ने सृष्टि को संवारा है और श्रम ने पोषण किया है। श्रम के समक्ष ढपोरशंख हार जायेंगे। दूसरों के लिए गढ्ढे खोदने वाले एक दिन यही शिकंजा तुझे भी जकड़ लेगा। नारियाँ स्वयं को परख रही हैं। श्रमिक, दलित अपना प्रकाश स्वयं बनने को आतुर हैं। छल, कपट, शिकंजे की राजनीति शासन, प्रशासन नीचे से ऊपर तक निर्बाध चल रहे हैं। संसार का सबसे बड़ा यही अचम्भा है। मूल निवासी गरीब दलि, भूमिहीन जीवित कैसे हैं? भारतीय कारखाने में समाजिक शिकंजे निर्मित होते हैं।

–यदुनाथ सेवटा

विज्ञापन

सोच के इजाफे की पत्रिका
मुश्किल हो रहा है इतनी प्रतियां छापना
सोलह वर्ष तक नियमित आप तक पहुँचाने का अनवरत काम

यह पत्रिका विज्ञापन विहीन पत्रिका लग रही होगी। असल में हमें विज्ञापन नहीं मिलते। इसका कारण हमारी कोई विज्ञापन नीति नहीं। कुछ विज्ञापन आ भी जाते हैं। हम जब भी विज्ञापन की परख/सत्यता की बात करते हैं, हमें विज्ञापन नहीं मिलते। दिक्कत ये आ रही है कि सदस्यों को नियमित भेजते समय जितनी कापियाँ भेजनी पड़ रही है उतने की पूंजी में दिक्कत आ रही है अतएव हम अपनी हाल सुधार के लिए अगले एक वर्ष तक नई सदस्यता बंद कर रहे हैं।

क्षमा सहित

जितेन्द्र जितांशु

जितेन्द्र जितांशु
सम्पादक : सदीनामा

बांग्ला साहित्य की विरासत "बंगीय साहित परिषद"

सियालदह से श्यामबाजार की तरफ जाने पर बांग्ला की पाण्डुलिपियाँ यहाँ देखें। हमलोग नए संग्रहालयों पर लगातार खबर प्रकाशित कर रहे हैं–सं०

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रोड में स्थित बंगीय साहित्य परिषद ने 125 वीं सालगिरह मनायी। यह पुस्तकालय बांग्ला साहित्य का संग्राहक है। पुस्तकालय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के संग्रह की हुई 3500 किताबों की पुस्तकालय है। यहाँ पर चंडीदास द्वारा रचित "श्री कृष्ण कीर्तन" जो मध्यकालीन बांग्ला कवितों की सबसे पुराना उदाहरण है। इस पुस्तकालय में 9000 से भी ज्यादा पांडुलिपियाँ रखी हुई हैं। यह पांडुलिपियाँ ब्लॉक प्रींटिंग टेक्नोलॉजी और विलियम केरी के लिए देश की प्रथम लकड़ी की छपाई की स्पष्ट झलक मिलती है।

इस पुस्तकालय में एक हिस्सा ऐसा है जहाँ 1000 वर्ष पुराना बंगला साहित्य की पुस्तकें रखी हुई हैं। यह रवीन्द्रनाथ ठाकुर, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, गगनेन्द्रनाथ टैगोर, रमेशचंद्र दत्त और रमेन्द्रसुन्दर द्विवेदी का सपना है। उन्होंने अंग्रेजी सरकार से बांग्ला साहित्य को बचाने के लिए इस भवन का निर्माण किया था। उनका यह सपना 1894 में साकार हुआ जब राजा विनोय कृष्ण देव ने बंगाल एकादमी ऑफ साहित्य को शोभाबाजार राजबारी में पुस्तकालय खोलने के लिए अपनी रजामंदी दी। जिसके एक साल बाद इस भवन का नाम बदलकर बंगीय साहित्य परिषद रखा गया। पुस्तकालय के हर कोने में किताबें, पांडुलिपियां और प्रकाशन रखे हुए हैं। उसके बाद एक कक्ष में श्रीकृष्ण कीर्तन के 13 अध्याय लाल रंग के कपड़े में लपेट कर रखे हुए हैं।

राष्ट्रपति महामहिम प्रणव मुखर्जी की प्रेरणा से संस्कृति मंत्रालय ने इस पुस्तकालय को नया बनाने के लिए 10 करोड़ रुपये दिए हैं। भगवत पंथी जो वृक्ष के छाल पर लिखा हुआ है या मानस मंगल जो नागरी लिपि में पर बंगाली भाषा में लिखा हुआ है, ऐसी पांडुलिपियों को देखने के लिए हमें परिषद जाना पड़ता है। यहाँ पर 1802-1818 तक के बंगाली किताबें रखी हुई हैं। आनन्दमंगल, श्रीरामपुर मिशन का रामायण, दिगदर्शन पत्रिका, पाशवाबाली और समाचार दर्पण भी यहाँ पर रखी हुई है।

सिर्फ बांगला ही नहीं यहाँ पर अंग्रेजी किताबें भी मौजूद हैं। 1680 की कुछ अंग्रेजी किताब जो कि इस पुस्तकालय में रखी हुई हैं– 'सम पैसेजेज ऑफ द लाइफ और डेथ ऑफ जॉन अर्ल ऑफ राचेस्टर' यहाँ मौजूद हैं।

पुस्तकालय के सचिव रतन नन्दी का कहना है कि 121 सालों तक सिर्फ इसी परिषद ने लगातार अपनी पत्रिका छापी है। इस संस्थान ने 400 से अधिक टाइटेल्स छापे हैं जो कि आज के बंगाली साहित्य के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। यहाँ पर कुछ हिन्दी पुस्तकें भी हैं। जो हिन्दी प्रकाशक पुस्तकें देना चाहें दे सकते हैं।

– सुमिता मुखर्जी

नई पत्रिकाएं

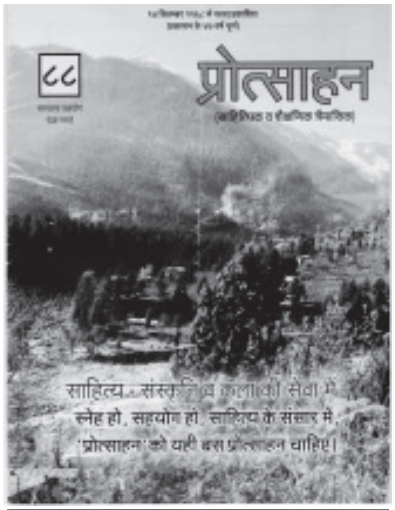

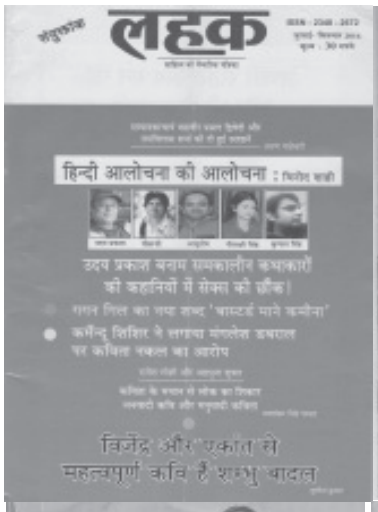

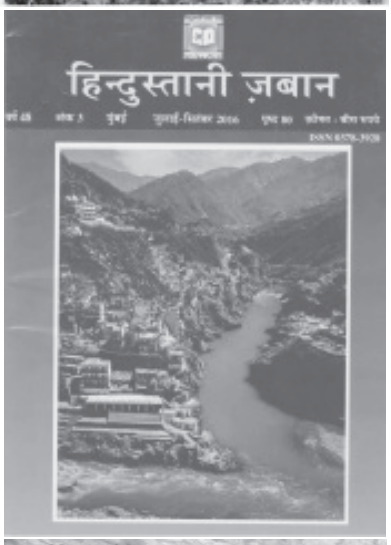

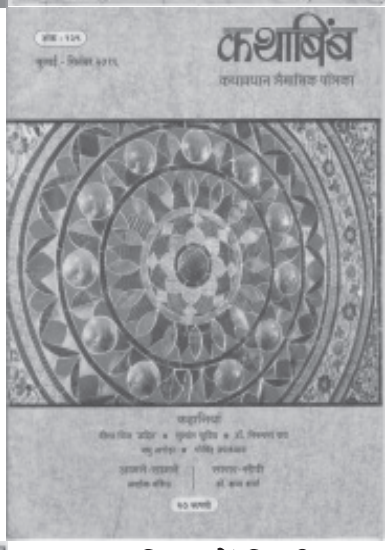

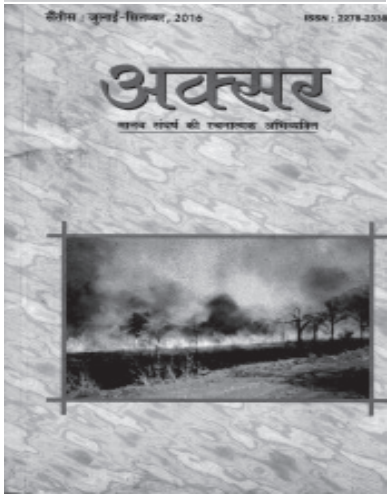

किताबें मिली

1. **प्रोत्साहन** - सं०श्रीमती कमला जीवितराम सेतपाल
2. **लहक** - सं० निर्भय देवांश
3. **द वेक** - सं० शकुन त्रिवेदी
4. **हिन्दुस्तानी ज़बान** - सं० डॉ सुशीला गुप्ता
5. **विपाशा** – सं० शशि ठाकुर
6. **कथाबिंब** – सं० डॉ माधव सक्सेना "अरविन्द
7. **अक्सर** – सं० हेतु भारद्वाज
8. **हिन्दी प्रचारक पत्रिका** – सं० विजय प्रकाश बेरी तथा अनिल बेरी

विशिष्ट लेख

अरबी-फारसी व हिन्दी के मेल से बने ५० मुहावरे व वाक्य – कुछ उदाहरण

'फिराक' साहब कहते हैं कि –"हजारों फ़िकरे और जुमले हमारी भाषा में ऐसे हैं, जिनमें से हम अरबी-फारसी शब्द निकालें तो हमारी बोली बिगड़ जायेगी। जैसे 'राह' फारसी का शब्द है, इसे अगर हम अपनी भाषा से निकाल दें तो हम यह नहीं बोल सकते – राह पर लगना, राह पर लाना, अपनी राह लगो, राह या रास्ता लेना, राह कठिन है, राह चलते दिल में राह करना, राह में काँटे बिछाना, राह देखना, राह भूलना, राह न चलना, राह पाना, राह या रास्ता देना, राह छोड़ना, इधर राह कैसे भूल बैठे ?"

–निम्नलिखित फ़िक़रो, मिसरों, मुहावरों और शेरों में अरबी-फारसी के साथ हिन्दी शब्दों का मेल ध्यान देने योग्य हैं – कुछ उदाहरण देखें–

1. एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाना, 2. खून-पसीना एक करना 3. खूबी, दिल को दिल से राह देती है, 4. दिल से उतर जाना, 5. दिल में घर करना, 6. दिल आ जाना, 7. जान का जंजाल, 8. दिल भर आना, 9. बड़ी मुसीबत है, 10. बड़ी मुश्किल है, 11. शामत आई हुई है, 12. खुदा खैर करे, 13. जवान-जहान 14. मान न मान मैं तेरा मेहमान, 15. अब आप चलते-फिरते नजर आइये, 16. होश की दवा करो, 17. जवानी-दीवानी, 18. जो शरारत करेगा, उसकी खबर ली जाएगी, 19. खाक में मिलना 20. नई जवानी मांझा ढीला।

–कुछ और वाक्यों में से अरबी-फारसी शब्द अगर हम निकाल देना चाहें तो हमारी बोली का बुरा हाल होगा– कुछ वाक्य और देखें–

21. दिल ने दुनिया बसा डाली और हमें आजतक खबर न हुई 22. तुम्हें कुछ खबर भी है 23. भाई, खूब आये, 24. यह जो काबू में ही नहीं आये, 25. आज बाजार बंद है, 26. खुलता किसी पे क्यों मेरे दिल का मुआमला 27. मुझ पर रौब न जमाइये 28. मैं उनके रौब में आ गया 29. मेरा बच्चा बीमार है 30. होश की दवा करो 31. चुगली खाना बहुत बुरी बात है 32. जी जान से कोशिश करो 33. खैर, देखा जायेगा 34. आजकल वह मुझ पर बहुत मेहरबान है 35. आप अजब आदमी हैं 36. हँसी-खुशी जिंदगी काट दो 37. खरबूजे से खरबूजा रंग पकड़ता है 38. किफायत करना सीखो 39. तुम हजार मना करो, वह अपनी आदत से बाज नहीं आयेगा 40. दीवार पर सफ़ेदी फेरी जा रही है 41. यह आदमी सियाह-सफ़ेद का मालिक है 42. मैदान साफ़ है 43. यह लड़का हमारे घर का चिराग है 44. दवा पी लो 45. इलाज करवाओ 46. नाखून कटवालो 47. मेरा बड़ा नुक्सान हुआ 48. शोर मत मचाओ 49. मुझे मालूम नहीं 50. बड़ी बदनामी हुई।

मात्र 6 शब्द के 75 प्रयोग–

उदाहरणस्वरूप मात्र 6 शब्द देखते हैं – साफ़, खराब, गजब, नाम, रंग और दाम।

'साफ़' शब्द के विभिन्न प्रयोग

1. तुमने बात समझा दी मेरा दिल साफ़ हो गया, 2. उसने रूपया देने से साफ इंकार कर दिया 3. रामचन्द्र की लिखावट साफ़ है 4. तुम्हारा लिखा हुआ मुझसे साफ़ नहीं पढ़ा जाता 5. साफ़-साफ़ बताओ तुम क्या चाहते हो 6. जादूगर के हाथ की सफाई देखने के लायक है 7. मोटेमल पाँच सेर खाना साफ़ कर गए 8. सफाई के गवाह कल पेश होंगे 9. मेरा हिसाब साफ़ हो गया 10. 'दाग' का मिसरा है "साफ़ छुपाते भी नहीं, सामने आते भी नहीं" 11. साफ़ बात तो यह है 12. उनकी नीयत साफ़ नहीं है 13. घोड़ा दो गज की की टट्टी साफ़ कूद गया 14. हाथ भी साफ़ है और दिमाग़ भी साफ़ है।

'ख़राब' शब्द के विभिन्न प्रयोग

1. बड़ा खराब आदमी है 2. दावत में लोग कम आये बहुत-सा खाना खराब हो गया 3. छिपकली गिर पड़ी कुल खाना ख़राब हो गया 4. बुखार में मुँह का मज़ा ख़राब हो जाता है 5. कीचड़ में गिराने से उसके कपड़े ख़राब हो गये 6. वह बचपन से ख़राब संगत में पड़ गया था 7. हमारा वक्त ख़राब न कीजिए 8. वकील की गलत बहस से हमारा मुक़दमा ख़राब हो गया 9. हाकिम ने बड़ा ख़राब फैसला दिया है

10. उसके इम्तहान का नतीज़ा बड़ा ख़राब निकला 11. यहाँ का जलवायु ख़राब है 12. तुम खुद तो ख़राब हो ही, दूसरों को भी खराब करोगे 13. उर्दू का एक प्रसिद्ध शेर है – "यह जो चश्म-पुरआब है दोनों/एक खाना खराब हैं दोनों"

'ग़ज़ब' शब्द के विभिन्न प्रयोग

1. ग़ज़ब की तक़रीर थी 2. ग़ज़ब की आँख तो है, उल्फत की नज़र सही 3. आप क्या ग़ज़ब ढा रहे हैं 4. ऐसा कीजिएगा तो गज़ब हो जाएगा 5. खुदा का ग़ज़ब है 6. ग़ज़ब का सैलाब आया 7. यह क्या ग़ज़ब है।

'रंग' शब्द के विभिन्न प्रयोग

1. रंग लाना 2. रंग उड़ना 3. रंग जमाना 4. रंग बाँधना 5. रंग पकड़ना 6. रंग बदलना 7. रंग चमकाना 8. रंगे-तबीयत 9. रंगे महफिल 10. यह शेर 'गालिब' के रंग में है 11. रंग-ढंग 12. रंग मलना 13. रंग खेलना 14. रंग उछालना।

'नाम' (यह शब्द संस्कृत का भी है और फ़ारसी का भी) के विभिन्न प्रयोग

1. नाम रखना 2. नाम उछालना 3. नाम कमाना 4. नाम करना 5. नाम लेना 6. नामी गरामी 7. नाम से काँपना 8. क्या नाम कि 9. नाम बनाम 10. बराये-नाम 11. नाम वाला 12. नाम चमकना 13. नाम तक न लेना 14. नामें-ख़ुदा।

'दाम' शब्द के विभिन्न प्रयोग

1. दाम लगाना 2. दाम उठाना 3. दाम बढ़ना या घटना 4. दाम चढ़ना 5. दाम उतना 6. दाम के दाम 7. दाम वसूलना 8. मुनाफा तो नहीं हुआ लेकिन दाम के दाम निकल आये 9. दाम लिखा हुआ है 10. दाम बहुत देने पड़े 11. आम के आम गुठलियों के दाम 12. दाम गिरना 13. दाम मारना 14. बे-दामों मोल ले लेना।

पिछले पोस्ट में जिन्होंने पढ़ा, शेयर, पसंद या कमेंट किया, सबको धन्यवाद

अगली पोस्ट में अरबी-फारसी के करीब 700-800 शब्द जो आम आदमी की जुबान पर चढ़े हुए हैं।

–प्रमोद साह 'नफीस'शायर
कोलकाता, capramodshah@gmail.com

श्री शिक्षायतन ने किया विज्ञान प्रदर्शनी

श्री शिक्षायतन स्कूल में विज्ञान पर एक प्रदर्शनी आयोजित की गई। इसमें कक्षा 5 से 12 तक के बच्चों ने भाग लिया। उनका जो कॉनसेप्ट बहुत क्लीयर था और उनका उत्साह भी। वहाँ की प्रिंसिपल संगीता टंडन से बात हुई उन्होंने कहा हम लड़कियों को केवल रसोइघर की सीमा से दूर ले कर जाना चाहते हैं। इसलिए इनको एक क्रियेट के लिए प्रोत्साहन दे रहे हैं। जिससे समाज में जो भ्रांति है कि लड़कियाँ कुछ नहीं कर सकती वो मिटे। –मीनाक्षी सांगनेरिया

सदीनामा के तत्वावधान में

Six Months Translation Course
श्याम बाजार मेट्रो के पास
बुधवार– सायं 6 से 8.30
शुक्रवार – सायं 6 से 8.30
व्यवस्थापिका : **पूजा मिश्रा,** मो० : 9874254775

आप अपनी रचनाएं भेजें

48/49 -A स्वीस पार्क, कोलकाता- 700 033
☎: 9231845289, 2470-4061,
E-mail : jjitanshu@yahoo.com,

अगर आपको पत्रिका पढ़ने लायक लगे तो! सदीनामा को श्रमराशि दे ही दें!!

एक वर्ष : 100/-
पाँच वर्ष : 500/- रुपये,
आजीवन : 5,000/- रुपये
Canara Bank A/c Name : Sadinama Prakashan,
A/c No. : 1417201001441,
Type of Account : Current A/c
IFSC Code : CNRB001417
MICR Code : 700015031
पैसा जमा करके पता SMS कर दें।

पृष्ठ 1 का शेषांश

तलाक से आगे...

साक्षर है, तो हमारी तादाद सिर्फ 62 फीसदी है। 13 फीसदी का फर्क क्यों है? हम लड़कियाँ बिहार में 48.4 फीसदी, झारखण्ड में 56.4 फीसदी, उत्तर प्रदेश में 50.5 फीसदी और पश्चिम बंगाल में 64.8 फीसदी ही साक्षर हैं। यानी पूरे देश में जो मुसलमान लड़कियाँ पढ़ लिख नहीं सकती, उनकी तादाद लगभग चार करोड़ चालीस लाख है। पूरे मुल्क में हम सिर्फ साढ़े दस फीसदी मुसलमान लड़कियाँ मैट्रिक कर पायी हैं। सिर्फ साढ़े सात फीसदी ही इंटर हैं और ग्रेजुएट महज चार फीसदी। जरा सोचिए कि 21 वीं सदी में हम कैसा समाजी निजाम कायम करना चाहते हैं?

हम काम करना चाहते हैं, लेकिन हमारे लिए काम कहाँ है। आंकड़े बता रहे हैं कि लगभग 15 फीसदी हम मुसलमान महिलाएं ही किसी न किसी तरह के काम में लगी हुई हैं। और हमारी बड़ी तादाद दिहाड़ी काम में लगी हुई है, यह बताने की जरूरत नहीं है। हम बताना चाहती हैं कि 64 लाख मुसलमान महिलाएं काम करने की ख्वाहिश रखती हैं, पर उनके पास कोई काम नहीं है। क्या यह हमारी जिंदगी का मुद्दा नहीं हैं?

हमारी जिंदगी पर हमारा दखल नहीं है। हम अपने फैसले खुद नहीं ले सकती हैं। इसीलिए हममें से साढ़े तीन करोड़ महिलाओं की शादी 21 साल से कम में ही कर दी गयी। आज भी ऐसी शादियाँ हो रही हैं। 2011 में हममें से लगभग पौने तीन लाख ऐसी मुसलमान लड़कियाँ शादीशुदा हैं, जिनकी उम्र 10 से 14 साल के बीच है। कानूनी रूप से ऐसा करना जुर्म है। फिर भी यह जुर्म हमारे साथ हो रहा है। 2011 में 21 लाख से ज्यादा हम मुसलमान स्त्रियाँ तलाकशुदा की जिंदगी गुजार रही हैं। इनमें 14 साल की तलाकशुदा लड़िकियाँ भी हैं।

वैसे तो हर लड़की के लिए सुरक्षा एक अहम मुद्दा है। मगर, हम मुसलमान लड़कियों के बारे में जरा अलग से गौर करना जरूरी है। दंगे-फसाद हमारी जिन्दगी के साथ चस्पां हो गये हैं। दंगों में हमारे साथ यौन हिंसा आम है। हमारे आने जाने पर पाबंदी लगा दी जाती है। हमारी पढ़ाई छुड़वा दी जाती है। कम उम्र में शादी कर दी जाती है। हमें हमेशा शक की निगाह से देखा जाता है। जब न तब, पुलिस हमारे घर के मर्दों को पकड़ कर ले जाती हैं। बाप-भाई-पति-बेटा अगर मारा गया या पकड़ा गया, तो उसके असर को भी हम महिलाओं को ही सबसे ज्यादा झेलना पड़ता है। कहीं कुछ होता है, तो हम खौफ में जीते हैं। मगर संविधान ने तो हर नागरिक को बेखौफ जिन्दगी जीने की गारंटी दी है, फिर यह खौफ क्यों है?

हमने सुना है कि सच्चर आयोग ने मुसलमानों के हालात को बेहतर बनाने के लिए कई सिफारिशें की हैं। सुना है,वे लागू भी हो रही हैं। मगर, ज्यादातर मुसलमानों और खासतौर पर मुसलिम महिलाओं की जिन्दगी में तो बहुत बदलाव दिख नहीं रहा है।

हमारा मसला सिर्फ निजी कानून नहीं है। हम बराबरी और इंसाफ पर आधारित नागरिक होने का हक चाहते हैं।

शादी और तलाक के पीछे-आगे भी जहां है। हम उस जहां का लुत्फ लेना चाहते हैं। हम भी इंसान हैं। हमारे पास अक्ल और हुनर हैं हमें बराबरी से जीने का मौका, बराबरी से पढ़ने का मौका, बराबरी से बेखौफ अपनी जिन्दगी के बारे में फैसला लेने का मौका चाहिए। शायद संविधान और इसलाम दोनों की रूह यही है। इस रूह को बरकरार रखने के लिए भी हंगामा बरपा नहीं होता?

नासिरुद्दीन, वरिष्ठ पत्रकार

यह रपट हमें rampuniyani@gmail.com से मिली (सं.)

सदीनामा फेसबुक पर भी उपस्थित है

- सदीनामा का फेसबुक पेज पसन्द (लाइक) करें।
- रचनाओं के बारे में अपने विचार साझा करें।
- सदीनामा में प्रकाशित होने वाले विचार / विमर्श / शीर्षक पर अपनी प्रतिक्रिया दें।
- हमारी बेबसाइट www.sadinama. com पर जाएं।
- आज ही सदीनामा से जुड़ें।

सरकार द्वारा सरोगेसी को अवैध करार दिए जाने का फैसला

इस भागदौड़ के जमाने में जहाँ लोगों को सांस लेने की भी फुरसत नहीं होती वहाँ दम्पत्तियों के लिए बच्चा जन्म देना सबसे बड़ी समस्या बन रही है। तनाव, टेंशन, भाग-दौड़, सही खाने-पीने के अभाव के कारण अक्सर दम्पतियों में बांझपन पाया गया है। उन्हें अक्सर बच्चे को गर्भ में धारण करने में समस्या हो रही है। ऐसे में सरोगेसी की बढ़ी हुई लोकप्रियता उनके लिए वरदान बनकर उभर रहा है। सरोगेसी का मतलब है किराए की कोख। जब एक दूसरी औरत दम्पत्ति के बच्चे को जन्म देने का भार लेती है तो ऐसे औरत को सेरोगेट मदर कहते हैं और इस पूरी क्रिया को सरोगेसी कहा जाता है। सरोगेसी दो तरह की होती है:–

(1) फुल सरोगेसी (जिसे होस्ट या जेसटेशनल कहा जाता है) – यहाँ एम्ब्राओ को संभावित अभिभावकों के अण्डे और शुक्राणु द्वारा दान में दिए हुए संभावित पिता के शुक्राणु द्वारा निषेचित किया हुआ अंडा, डोनर के अंडे और शुक्राणु से तैयार किए गए एम्ब्राओं को एक औरत के शरीर में दाखिल किया जाता है।

(2) पार्शियल सरोगेसी (जिसे सेट और ट्रेडिशनल कहा जाता है)– यहाँ संभावित पिता के शुक्राणु और सरोगेट के अण्डे को कृत्रिम बोवाई द्वारा निषेचित किया जाता है।

इस तरह बच्चे को जन्म देने से दोनों पक्षों की आकांक्षायें पूर्ण हो जाती हैं। जो गरीबी से जूझ रहे हैं उन्हें पैसे मिल जाते हैं और जो बांझपन की समस्या से जूझ रहे हैं उन्हें बच्चे का सुख प्राप्त होता है। इस साल कोलकाता में 3,000 से भी अधिक महिलाएं इस तरह से प्रेगनेंट हो रही हैं। आई सीएम आर (इण्डियन काऊंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च) ने शहर में 10% महिलाएं दान किए हुए अंडे द्वारा प्रेग्नेंट हो रही हैं। गर्भाशय नाल में खराबी और खराब गुणवत्ता वाली अंडे महिलाओं में गर्भधारण न करने की मूल समस्या है। जिस कारण सरोगेशी की लोकप्रियता बढ़ रही है। दो सप्ताह के अन्दर अंडे को औरत के शरीर में डाला जा सकता है।

भारत में असिस्टेंट रिप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी, जिसमें आई.वी. एफ और सरोगेसी सर्विसेस शामिल है की उद्योग 3000 करोड़ है। परन्तु सरकार ने इसे अवैध घोषित करना चाहती है। सरकार ने सरोगेसी द्वारा बच्चे पैदा करने वाले लोगों के लिए सरोगेसी रेगुलेशन बिल 2016 के तहत कुछ नियम लागू किए हैं–

1. पति की रजामंजूरी जरूरी है।

2. अकेले रहने वाले लोग, बिना शादी के साथ रहने वाले लोग, समान लिंग (गे और लेसबियन) के लोग, विदेशी मूल के लोग, एन.आर.आई., पी.आई. ओ.एस., ओ.सी.आई. कार्ड धारक और विवाहित लोग जिनके अपने बच्चे हैं। इस बिल के अनुसार, दंपत्ति जिनके बच्चे नहीं हैं और जिनकी विवाह का समय 5 साल से अधिक है वे ही सरोगेसी करवा सकते हैं।

3. कमर्शियल सरोगेशी पर रोक। सरोगेट दम्पत्ति के परिजनों में से एक होने चाहिए, शादी-शुदा होने चाहिए और उनके अपने बच्चे होने चाहिए।

4. सरोगेट मदर की उम्र 35 साल से कम होना चाहिए और तीन डोनेसन के ज्यादा नहीं होना चाहिए।

5. सरोगेट मदर जन्म देने के बाद अपने बच्चे के साथ कोई सम्पर्क नहीं रख सकता है।

इस पर सरोगेसी करा चुकी एक महिला का कहना है कि सरोगेसी को अवैध करार नहीं देना चाहिए। यह एक बच्चे को अनाथ आश्रम से गोद लेकर उसके लालन-पालन की जिम्मेदारी लेने जैसा है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि यहाँ बच्चा अपने ही क्रोमोजोन का होता है जिसके जेनेटिक कैरेक्टर माँ-बाप की तरह ही होते हैं।

–सुमिता मुखर्जी (चक्रवर्ती) तथा अनिता राय

सरोगेसी क्या है?

सरोगेसी किराये की कोख है। यह भारत के आनंद कस्बे में सबसे ज्यादा है। मुम्बई तथा कोलकाता भी पीछे नहीं, कोलकाता में विदेशी भी सरोगेसी के लिए आते हैं।

–सम्पादक

विविध

भारत के प्रथम "राष्ट्रीय" नेता सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी

भारतीय सिविल सेवा के 1869 बैच के यह अधिकारी एक अनुभवी सिविल सेवक के रूप में उभर सकते थे। किन्तु 1874 में कमजोर आधार पर सेवा से हटाए जाने के बाद उन्होंने अपनी प्राथमिकताएं दोबारा तय की। वे सार्वजनिक जीवन में आए। 1858 में भारत सीधे तौर पर अंग्रेजी शासन के अधीन आ गया था। बंगाल एवं बॉम्बे प्रेसिडेंसी में इससे पहले ही संवैधानिक राजनीति बढ़ गई थी। इसके बावजूद भारत के विभिन्न भागों के बीच संवादहीनता से उनका आपसी संपर्क कायम नहीं हो पाया। किन्तु 1870 एवं 1880 के दशक में रेल नेटवर्क के प्रसार ने इन कमियों को दूर कर दिया। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी (1848-1925) इसका लाभ उठाने के लिए सही समय पर सही व्यक्ति थे। वह अखिल भारत के प्रथम नेता के रूप में उभरे।

वर्ष 1875 तक कैरियर बर्बाद होने के बाद बनर्जी ने कोलकाता में सार्वजनिक जीवन में सम्मिलित होना शुरू किया। बंगाल में शराबबंदी आन्दोलन के दौरान मदिरापान के विरुद्ध दिए भाषण से लोगों का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हुआ। महान शिक्षाविद एवं सुधारक ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने उनको मेट्रोपॉलिटन इन्स्टीट्यूशन में अंग्रेजी का प्रोफेसर बना दिया।

वह कुशल वक्ता थे एवं शीघ्र ही कोलकाता एवं निकटवर्ती स्थानों में छात्र समुदाय के बीच वे प्रसिद्ध हो गये। वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारतीयों को इटली के एकीकरण के पथ-प्रदर्शक ज्यूजेप मेत्सिनी (Giuseppe Mazzini) से परिचित कराया। बनर्जी ऐसे प्रथम नेता थे जिन्होंने भारतीय एवं विदेशी इतिहास की सामग्री का उपयोग श्रोताओं में देशभक्ति की भावना पैदा करने में किया। किन्तु वे खालिस नर्म विचारधारा वाले नेता बने रहे। उन दिनों ब्रिटिश शासन में 'स्वतंत्रता' की कोई मांग नहीं थी। मांग विधान परिषदों एवं नौकरशाही में बेहतर प्रतिनिधित्व दिलाने की थी, जिससे कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहभागिता हो पाए।

बनर्जी के मस्तिष्क में एक राजनीतिक संघ बनाने की बात थी। यह सपना 26 जुलाई, 1876 को सच हुआ। उन दिनों बनर्जी ने कोलकाता में आनन्द मोहन बोस के साथ मिलकर 'इण्डियन एसोसिएशन' का निर्माण किया। मैत्सिनी से प्रेरित बनर्जी राजनीतिक महत्वाकांक्षा एवं कार्यक्रम के क्षेत्र में भारत का एकीकरण चाहते थे। भारतीय सिविल सेवा में भाग लेने की अधिकतम आयु 21 वर्ष से घटाकर 19 वर्ष करने के ब्रिटिश प्रधानमंत्री मार्क्वीज़ सैलिस्बरी के निर्णय ने इसका अवसर प्रदान कर दिया। बनर्जी ने इस अवसर की पहचान भारतीयों की सिविल सेवा से बाहर रखने की चाल के तौर पर की। उन्होंने इस निर्णय के विरुद्ध 24 मार्च 1877 को कोलकाता के टाउनहॉल में विशाल जनसभा की। इस बैठक में ऐसी कार्ययोजना को स्वीकृति मिली जिसकी कोशिश इससे पहले नहीं की गई थी। इसमें सम्पूर्ण भारत को सिविल सेवा के मुद्दे के अलावा आम तौर पर भारतीयों को प्रभावित करने वाली सभी नीतियों के मामलों में एक मंच पर लाने का प्रस्ताव किया गया।

26 मई 1877 को जब बनर्जी ट्रेन से उत्तर भारत की यात्रा पर निकले तब कम ही लोगों को अहसास था कि वो इतिहास बनाने जा रहे हैं। वह पहले भारतीय थे जिन्होंने बढ़ते हुए रेल नेटवर्क का प्रयोग राजनीतिक कारणों से किया। 1870 के दशक के मध्य तक देश के रेल नेटवर्क 6,519 मील (10430 किमी) हो गया था। बनर्जी ने लाहौर, अमृतसर, दिल्ली, मेरठ, अलीगढ़, कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद एवं वाराणसी को अपनी यात्रा के दौरान कवर किया। सभी स्थानों पर सिविल सेवा के ज्ञापन के अनुमोदन के लिए सभाएं आयोजित की गई जिसमें बड़ी संख्या में लोग शामिल हुए।

जहाँ भी संभव हुआ कोलकाता की इण्डियन एसोसिएशन बनाई गई। इस तरह से बनर्जी ने सार्वजनिक जीवन ने आकार लिया, जिसकी प्रतीक्षा भारत के एक सिरे से लेकर दूसरे

सिरे तक थी। इसके बाद वाले वर्ष में उन्होंने बॉम्बे एवं मद्रास प्रेसिडेंसी में ऐसी ही यात्रा आयोजित की। उनका उद्देश्य बिखरी हुई राजनीतिक महत्वकांक्षाओं और संबंधित गतिविधियों को एकीकृत करना था। इस प्रक्रिया में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का आधार कार्य पूरा किया। तदनंतर जिसकी स्थापना दिसंबर 1885 में हुई।

वास्तव में 1883 में 28 से 30 दिसम्बर तक कोलकाता में आयोजित इण्डियन एसोसिएशन के पहले राष्ट्रीय सम्मेलन में कांग्रेस अपने आरम्भिक स्वरूप में सामने आ चुकी थी। सम्मेलन की अध्यक्षता बंगाल पुनर्जागरण के वयोवृद्ध पुरोधा रामतनु लाहिड़ी ने की थी। इस दौरान प्रतिनिधि परिषद् अथवा स्वशासन, सामान्य एवं तकनीकी शिक्षा, दण्ड विधान के प्रशासन में न्यायिक एवं कार्यपालिक कार्यों का पृथक्करण और सार्वजनिक सेवाओं में भारतीयों हेतु अधिक रोजगार जैसे मुद्दों पर चर्चा हुई।

मई 1884 में बनर्जी ने सिविल सेवा के प्रश्न के अनसुलझे उत्तर को लेकर पुन: उत्तर भारत की विस्तृत यात्रा की। उन्होंने कोलकाता के लाहौर के पुराने रास्ते का थकाऊ भ्रमण किया। राज्य सचिव के समक्ष सिविल सेवा परीक्षा में हिस्सेदारी की अधिकतम उम्र बढ़ाने का मुद्दा उठाया गया। वर्ष 1885 में लोक सेवा आयोग की नियुक्ति की गई जिसकी अनुशंसा के परिणामस्वरूप अधिकतम आयु सीमा बढ़ाई गई। इण्डियन एसोसिएशन का दूसरा सम्मेलन 25 से 27 दिसम्बर 1885 में कोलकाता में आयोजित किया गया। मुम्बई में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम सत्र भी इन्हीं तिथियों पर आयोजित हुआ था। ये दोनों कार्यक्रम आयोजकों के बीच बगैर किसी समन्वय के आयोजित कराए गए थे। इससे बनर्जी बॉम्बे कांग्रेस सत्र में शामिल नहीं हो सके। वर्ष 1885 में कांग्रेस के बॉम्बे सत्र में चर्चा में रहे मुद्दों पर 1883 में हुए प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन की छाप थी। बनर्जी ने सूचना दी थी कि बॉम्बे कांग्रेस से जुड़े जस्टिस केटी तैलंग ने प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन के नोट मांगे थे। किन्तु 1886 से 1917 के मध्य बनर्जी ने कराची (1913) को छोड़ कर प्रत्येक वार्षिक कांग्रेस में उपस्थिति दर्ज की। बनर्जी ने पुणे (1895) और अहमदाबाद (1902) में कांग्रेस के सत्रों की अध्यक्षता भी की।

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी 1890 में इंग्लैण्ड गए कांग्रेस के 9 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल के सदस्य थे। प्रत्येक प्रतिनिधि को अपना खर्च पूर्णतया स्वयं वहन करना पड़ा। बनर्जी की पहचान एकमात्र प्रवक्ता के तौर पर बनी। राजनीतिक सुधारों पर उनके व्याख्यानों की शृंखला ने अंग्रेज श्रोताओं को भी प्रभावित किया। किन्तु उनके लिए सर्वाधिक सुनहरा क्षण 22 मई 1890 को ऑक्सफोर्ड यूनियन विमर्श के दौरान आया – हाउस ऑफ कॉमंस के समक्ष विधेयक में निर्वाचक सिद्धान्तों को मान्यता न मिलना इस सदन के लिए खेदपूर्ण है।' ऑक्सफोर्ड, अंग्रेजी कट्टरपंथी राजनीति का गढ़ होने के कारण प्रस्ताव गिर जाने का डर था। किन्तु उन्होंने लॉर्ड हग सेसिल के समक्ष बेहद चातुर्यपूर्ण तरीके से अपने तर्क रखे। अधिकतर सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में वोट दिया। इण्डियन काउंसिल एक्ट, 1892 में एक परोक्ष निर्वाचक सिद्धान्त को मान्यता मिल गई।

बनर्जी की अद्वितीय वक्तृत्व क्षमता उनका प्रधान गुण था। उनको 'ट्रम्पेट ऑरेटर' कहा जाता था। किन्तु यह भारत के प्रति उनके समर्पण का स्थानापन्न हीं था। उन्होंने कहा था कि जो अपने देश को प्रेम नहीं करता उसका श्रेष्ठ वक्ता होने की आकांक्षा पालने का क्या लाभ है। सन् 1905 से 1911 के मध्य में उन्होंने बंगाल के विभाजन के विरुद्ध आंदोलन में प्रमुख भागीदारी की किन्तु बहिष्कार और हिंसा की घटनाओं का विरोध किया। वह स्थानीय स्वशासन के हिमायती थे और रिपन कॉलेज (वर्तमान में सुरेन्द्रनाथ महाविद्यालय) के संस्थापक थे। वह 1921 में इम्पीरियल विधानसभा के सदस्य बन गए एवं उसी वर्ष 'नाइट' की उपाधि प्राप्त की।

–प्रियदर्शी दत्ता

पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार

लेखक एक स्वतंत्र शोधकर्ता एवं टिप्पणीकार हैं। इस लेख में व्यक्त विचार उनके निजी हैं। – सम्पादक

ISSN : 2454-2121
R.N.I. No. WBHIN/2000/1974
Central Govt. Postal Regn. No. TECH/WB/RNP/SP-003/2014-16

मूल्य : 5.00
E-mail : jjitanshu@yahoo.com

राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा आयोजित राष्ट्रीय चैम्पियनशिप और विश्व रोबोट ओलम्पियाड

राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् द्वारा आयोजित राष्ट्रीय चैम्पियनशिप और विश्व रोबोट ओलम्पियाड 2016 कोलकाता के नेताजी इंडोर स्टेडियम में आयोजित हुआ। 22 से 23 अक्टूबर से यह दो दिन का कार्यक्रम था जिसमें 245 टीमों ने भाग लिया। इसमें कक्षा 6 से लेकर कॉलेज के छात्रों ने हिस्सा लिया। यहाँ जि छात्रों को प्रदर्शनी में सर्वोच्च स्थान मिलेगा वे अन्तर्राष्ट्रीय वर्ल्ड रोबोट ओलम्पियाड में भाग लेंगे। मेरी बातचीत वहाँ के जनसम्पर्क अधिकारी सत्यजीत सिंह से हुई उन्होंने बताया 9 से 12 वर्ष के बच्चों को एलेमेन्ट्री बोर्ड दिया जाता है। 15 से 19 वर्ष के बच्चों को माइंड स्टोन दिया जाता है। जो 35 हजार का होता है जिससे दो रोबोट तैयार हो सकते हैं। फुटबाल 10 हजार की आती है जिसको रोबो के द्वारा ही खेला जाता है।

वहाँ पर मैंने कुछेक टीमों के बच्चों से बात की उन्होंने बताया हमलोग 6 महीने से इस तैयारी में लगे हुए हैं तब जाकर यह रोबोट हम तैयार कर पाये हैं। बच्चों का और उनके कोच का उत्साह देखने लायक था। राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय ने भी बहुत अच्छे से यह कार्यक्रम आयोजित किया। 23 टीम क्वालीफाइड हुई है जो कि वर्ल्ड चेम्पियन शिप जो 25-27 नवम्बर में भाग लेगी।

एनसीएसएन के महानिदेशक ए० एस० मानेकर ने बताया कि संग्रहालय परिषद् का नवोन्मेष केन्द्र छात्रों को नवाचार के लिए प्रेरित करेगा।

यह रपट मीनाक्षी सांगानेरिया ने लिखी

आगे आएं हाथ बढ़ाएं

आपको पत्रिका अच्छी लगी हो तो

- नियमित पढ़ने के लिए – सदस्य बनें
- स्तरीय पत्रिका लगे – रचनाएं भेजें
- पुराने सदस्य हैं - नवीनीकरण कराए
- किसी गतिविधि को बढ़ाना है– हमें लिखें
- कोई असाध्य रोग है– कोलकाता आएं।
- कोई योजना है– हमें लिखें

गंगासागर/पुरी/दार्जिलिंग/सिक्किम/ उत्तर पूर्व जाना है– हमारे विशेषांक पढ़ें।

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी सोनिया शर्मा द्वारा डायमंड आर्ट प्रेस, 37 ए, बेंटिक स्ट्रीट, कोलकाता-69 से मुद्रित तथा H-5, Govt. Qtrs. Budge Budge (बजबज), Kolkata-700137, 24 Pgs. (S), W.B. India से प्रकाशित । **संपादक : जितेन्द्र जितांशु**
☎: 9231845289, 2470-4061, E-mail : jjitanshu@yahoo.com, R.N.I. No. WBHIN/2000/1974